कर्म

श्रीनारायण दीनदयाल अवस्थी ।

सद्विचार पुस्तकमाला नं० १२

कर्म

विना कर्म्म के कभी न रण में जय की भेरी बजती है।
विना कर्म्म के कभी न जग में सौख्य राह भी मिलती है।
डग डग पग पग पर भी देखो कर्म्म कर्म्म ही छाया है।
कर्म्म किया है जिस प्राणी ने मोक्ष उसी ने पाया है।

लेखक—लक्ष्मीनारायण दीनदयाल अवस्थी।

प्रकाशक

हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ:—

प्रथमावृत्ति १०००] १९२० [मूल्य ।≡)

—o—

METHODIST PUBLISHING HOUSE, LUCKNOW.

प्राक्कथन ।

भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है :—

कर्म्मण्येवाधिकारस्ते माफलेषु कदाचन ।

अर्थात् हे अर्जुन ! तुझे केवल कर्म्म करने का अधिकार है, फलाशा का नहीं । तात्पर्य्य, तू निष्काम कर्म्म कर । यही सारे गीता ग्रन्थ का सार है और इसी को सुचारुरूपेण प्रगट करने के लिये "लोकमान्य तिलक महोदय" ने गीता रहस्य अर्थात् "कर्म्मयोग शास्त्र" जैसे राष्ट्रीय ग्रन्थ की रचना कर डाली है इसी प्रकार "स्वामी विवेकानन्द" का कर्मयोग विख्यात ही है । भावार्थ यही है कि इन सब महानुभावों ने देश सेवा और समाज सुधार के लिये यदि कोई मुख्य साधन माना है तो वह एक मात्र कर्म्म को ही ।

ऐसी अवस्था में सर्व साधारण के लिये कर्म्म का महत्व विदित होना परमावश्यक प्रतीत होता है और वह महत्व पाना । देश के महान्नेताओं के उपदेश से विदित हो सकता है, अथवा इस विषय के ग्रन्थों का मनन करने से । यद्यपि हिन्दी साहित्य में कर्म्म मीमान्सा करनेवाले कुछ इने गिने ग्रन्थ मौजूद हैं तथापि उनकी शैलिया भिन्न है । किसी ने निष्काम को मुख्य बतलाया है तो किसी ने सकाम को और किसी ने कुछ । ऐसा होने से कर्म्म का यथार्थ मर्म समझने के लिये लोग चक्कर में पड़ जाते हैं । हां गीता रहस्य जैसा बृहद् ग्रन्थ इसी कर्म्म की मीमांसा पर लिखा गया है तथापि उसका समझना सर्व साधारण के लिये सुगम नहीं

है अतः कर्म्म का महत्व दिखाने और उसकी सच्ची और सरल व्याख्या करनेवाले ग्रन्थों की हिन्दी संसार में बड़ी आवश्यकता थी। परन्तु आज हमें प्रकट करते बड़ा आनन्द आता है कि मित्रवर पण्डित लक्ष्मीनारायण अवस्थी की यह "कर्म" नामी पुस्तक उपरोक्त कमी की पूर्ति में बड़ी सहायता देगी। अवस्थी जी हिन्दी के उत्साही लेखक हैं और आप के द्वारा कर्म्मनामक ग्रन्थ लिखा जाना बड़े आनन्द की बात है क्योंकि एक तो आप स्वयम नवयुवक हैं, दूसरे आप में उत्साह, धैर्य्य आदि अनेक गुणों के साथ ही निरन्तर कर्म्म करते रहने की आदत है इसी लिये आप को कर्म्म विषयक ज्ञान भी अच्छा हो सकता है; ऐसी स्थिति में यह ग्रन्थ अनुभव पूर्ण माना जा सकता है और यह पुस्तक युवा समाज के लिये बड़े काम की होगी ऐसा हमें दृढ़ विश्वास है।

कर्म्म की मीमांसा बड़ी कठिन है और उसके विषय में यहां अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। पाठक गण, कर्म्म के मर्म को जानने के लिये इस पुस्तक को सोपान समझकर आद्योपान्त अवलोकन कर जायँ तो उन्हें कर्म्म विषयक कितनी ही बातें विदित हो जायँगी।

वैशाखी पूर्णिमा १९७६	गोपीवल्लभ शालिग्राम उपाध्याय
हिन्दी चित्रमय जगत्	सम्पादक "हिन्दी चित्रमयजगत"
आफिस पूना	

दो शब्द !

प्रिय पाठक !

मैं लम्बी चौड़ी भूमिका लिख आप को वृथा कष्ट दे आप का अमूल्य समय नष्ट नहीं करना चाहता परन्तु तिस पर भी आज कल की प्रथानुसार आप से केवल दो शब्दों द्वारा विनय करता हूं कि मैं ने इस छोटे से ग्रन्थ को न्याय, स्वास्थ्य, तर्क, सांख्य (योग) आदि अनेकानेक शास्त्रों द्वारा कर्म्म की विकट मीमांसा लिखने का साहस किया है । इस विषय को लिपि बद्ध करना कितना विकट है यह मेरे परममित्र पं० गोपीवल्लभ शर्म्मा जी ने अपने प्राक्कथन के अन्तिम चार शब्दों में लिखने की अनुकम्पा की है। परन्तु तिस पर भी मैं अपने प्रिय पाठकों से केवल एक वार इस ग्रन्थ के पढ़ने की प्रार्थना कर विनय करता हूं कि वे अपने लाभ की बातें चुन लेने की अनुकम्पा करें। मैं श्रीमान् बाबू चेतनदास जी बी. ए. हेड मास्टर गवर्नमेण्ट हाई स्कूल लखीमपुर को धन्यवाद देता हूं कि जिन्हों ने इस पुस्तक की रचना में सहायता दे अनुग्रहीत किया ।

मुर्रा–फतेहगढ़ (यू. पी.)
१. ६. १९१९

विनीत
लक्ष्मीनारायण दीनदयाल अवस्थी.

कर्म ।

हाथ धरकर गाल पर, चुप साध कर जो बैठते ।
आज कल के फेर में पड़कर न कुछ हैं देखते ॥
आदर निरादर का न जिनको तनिक सा भी ध्यान है ।
है उन्हें निःसार जग मिलता सदा अपमान है ॥
सनसनी जिनके हृदय में है नहीं उत्साह की ।
कार्य्य करने की जिन्हों ने है नहीं परवाह की ॥
कौन थे क्या बन गये हैं यह न जिनको ध्यान है ।
उनके लिये जग दुःखमय जीवन मरण समान है ॥

संसार असार है यह अवश्य आलसीजन इस कर्म्मक्षेत्र जग की परिभाषा करें, तथा ज्ञान शून्य मनुष्य चाहे भले अपने हाथ की गांजे की चिलम में से धुवां उड़ाते हुये इस जग को निःसार कहें; मूर्ख जन चाहे भले भाग्य के भरोसे गाल पर हाथ रक्खें, चुपचाप अपनी आलस्यमयी किसी धुन की धुन में भिड़ें, अपनी कञ्चन मयी देह में घुन लगालें परन्तु जो कर्मण्य पुरुष हैं वे कदापि इस जगत को निःसार नहीं मानते ।

वे कर्म्म कर जग के सामने कर्म्म का सार्थक मर्म खोल देते हैं। भूखा वही मरता है जो कर्म्म विमुख रहता है । दुःख उसी की भाग्य में लिखा हुआ है अर्थात उसी के गले का हार है जो कर्म्म

का तिरस्कार कर आलस्य का प्यार करता है। आपत्तियों से ग्रसित वही पुरुष है जो कर्म्म विहीन है, तथा कभी २ बीमार भी कर्म्म विहीन पुरुष ही सब से अधिक रहता है। बीमारियां भी कदाचित ऐसे ही पुरुषों के लिये बनी हैं। बहुधा देखा गया है तो उसी पुरुष की सब से अधिक आयु पाई गई है, तथा वे ही पुरुष शक्तिशाली अधिक पाये जाते हैं जो कार्य्य कर अपने अस्तित्व की ओर ध्यान दिया करते हैं और वे गल कर जांजर हो मुर्दा हो जाते हैं जो जीवित होते हुये भी मुर्दे के समान हैं, कि जिनके हृदय में कार्य्य करने का नाम निशान भी नहीं है।

चलते हुये लोहे पर जंग नहीं चढ़ता परन्तु जो लोहा पड़ा रहता है अर्थात् अकर्म्मण्य रहता है वह थोड़े ही दिनों जंग के वशीभूत हो अपना सर्वस्व खो बठता है और शनैः २ उसका नाम व निशान भी नहीं रहता। प्रत्येक मशीनें रात दिन चलने से साफ़ रहती हैं यदि मशीनों को वास्तविक आराम के अतिरिक्त अधिक आराम दिया कि वे बर्बाद हो जाती हैं, इसी प्रकार यह मनुष्य देह भी मशीन है यदि इस से सदा वास्तविक आराम के अतिरिक्त कार्य्य लिया जाय तो यह दिन दूनी और रात चौगुनी योग्य तथा सामर्थ बनती जायगी। कर्म्म ही इस देह का सार है कर्म्म से ही पुरुष अपनी देह को सब से अधिक दिनों तक रखता है तथा उसका उपयोग ले सकता है।

हम देखते हैं कि जिस समय हमारे यहां के पूर्वज तथा अन्य कर्म्मनिष्ठ पुरुष जब स्वयम् कार्य्य करते थे समृद्धिशाली तथा ऐश्वर्यवान् होते थे। जो कुछ वे कहते थे उसे वे सिद्ध कर दिखा देते थे, उनकी बात केवल कर्म्म के बल पर मिथ्या कदापि नहीं होती थी वे कर्म्म ही के बल से पृथ्वी हिला देते थे, बैरियों

का हृदय कँपा देते थे वे जहां जाते थे वहीं उनकी धाक से लोगों के हृदय पर धक्का पहुंचता था तथा उनका सर्वत्र मान था। परन्तु जब से उन पूर्ण गुणों की गरिमा का उनकी सन्तानों ने तिरस्कार किया तब से उनका पतन होता चला गया यहां तक कि आज घुटनों के बल पर भी खड़ा रहना असम्भव प्रतीत होने लगा। हम जब से कर्म्म करना भूल गये हैं तभी से ऐसी दशा हो गई है। आरामतलबी सदा क्षय पैदा करती है, "वीर महाराणा केसरी प्रताप" जो अभी हाल ही के समय में हुये हैं। हम जब अपनी आंख उनके जीवनचरित्र पर पात करते हैं तो पाते हैं कि उस वीर ने अपनी सारी आयु कार्य्य करने में व्यतीत की और अपनी अखण्ड शक्ति को केवल कार्य्य सिद्धि पर बिताया। वह कर्म्म वीर था, इस लिये उस से ..च्छों ने हार मानी। उसका जग में यश चहुं ओर मड़रा रहा है। महमूद गोरी जिसने हिन्दुस्तान पर कई बार आक्रमण कर जय पाई। यदि वह अपने घर ही में हाथ पर हाथ धरे बैठा रहता तो उसको हिन्दुस्तान में जय प्राप्त करने का सौभाग्य कदापि न मिलता। इसी प्रकार ईसा के जीवन पर दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है कि धार्मिक वीर ईसा ने केवल अपने निरन्तर कार्य्य पर ही निर्भर हो सारे संसार में अपने धर्म्म का झण्डा उड़ाया और उसका धर्म्म आज सर्वव्यापी हो रहा है और उसके धर्म्म की जय आज संसार के व्योम में व्याप्त हो रही है यह केवल उसके निरन्तर प्रयत्न एवम् साहस का परिणाम है।

सुख की प्राप्ति इसी कार्य्य पर ही निर्भर है। बीर वही कहलाता है जो डट कर कार्य्य करता है, तथा जिसका हृदय निरन्तर कार्य्य करने में साहस के साथ जुटा रहता है। साहस भी इसी

कार्य्य का एक अंग है और प्रत्येक पुरुष को उसके सम्पादन करने की बड़ी भारी आवश्यकता है प्रत्येक वीर पुरुष का तथा कर्म्मण्य पुरुष का धर्म्म है कि वह साहसी बने। साहस से काम करना प्रत्येक वीर पुरुष का धर्म्म है, उकता कर काम छोड़ देना वीरता नहीं है योधा वही कहलाता है जो साहस के साथ वीरताइ दिखाता है। पहलवान भी उसी कर्म्मण्य पुरुष को कहते हैं जो कार्य्य कर अपनी देह को ठीक बनाता है और जो कर्म्मच्युत रहता है वही मुर्दा है।

हम व्याकरण से सिद्ध किये हुये नपुन्सक लिङ्ग को भी पुलिङ्ग ही कहेंगे यदि वह नपुन्सक कार्य्यदक्ष रहता हो परन्तु वह पुलिङ्ग भी नपुन्सक लिङ्ग ही है यदि वह कार्य्य परायण नहीं रहता है। मर्द यदि मर्दानगी करे तो "मर्द" अन्यथा कुछ नहीं। हम स्त्री को भी मर्द मानेगे यदि वे मर्दो की तरह कार्य्य में परिणित रहती हों, यदि वे मर्द को अपने अनोखे कार्य्य के सामने तुच्छ सिद्ध कर देती हों तो वही देवियां अर्थात् मर्द कहाती हैं हमारे हिन्दोस्तान में ही बहुत से ऐसे उदाहरण मिलेंगे कि जिनसे यह प्रमाणित होगा कि स्त्रियां के सन्मुख पुरुष कोई वस्तु नहीं है उनका विकट साहस सदा सर्वदा सराहनीय है। जिनके अलौकिक शौर्य तथा विकट साहस के सामने शत्रुओं के कटक अपना साहस छोड़ भागें उन्हीं की जय की भेरी संसार में गूंजी जिनने अपने अलौकिक शौर्य्य के साथ कार्य्य किया। कार्य्य का सम्बंध किसी लिङ्ग, वचन आदि से नहीं है वह उसी का दास है जो उसका दास बनता है।

मर्द यदि कार्य्य करे तो मर्द अन्यथा मुर्दा है। मर्द और मुर्दा शब्द के लिखने में बहुत थोड़ा अन्तर है परन्तु इन दोनों शब्द का

[सिद्ध कर देना बहुत कठिन एवम् बहुत सरल है। मुर्दा सिद्ध कर दिखाना उतना ही सरल है कि जितना मर्द प्रमाणित करना दुस्तर है।

हमारा और भी कहना है कि यदि मनुष्य का प्रेत भी कार्य्य करे ते वह जीवित है और वही सब कुछ है परन्तु जीवित पुरुष भी मृतवत् है यदि वह अपने कर्म्म के नहीं जानता। हमने आज तक जितने मनुष्यों को उन्नति शील देखा है वे सारे कर्म्म ही के आधार से बने हैं हम आदि से अन्त तक कर्म्म ही की जय पाते हैं। कहां तक कहें यदि हवा भी अपने रात दिन चलने के कर्म्म को छोड़ दे तो वह विषमयी हो जाती है, यदि वह एक दिन भी रुक जाय ते दुनिया लयता को प्राप्त हो जाय इसी प्रकार बहती हुई नदी को भी मानिये कि यदि वह भी अपनी चाल को रोक ले तो शीघ्र समाप्ति को प्राप्ति हो।

हम जब देखते हैं कि प्रकृति की जीव रहित वस्तुयें भी अपना काम आप से ही आप निरन्तर करती हैं तब हम लोग तो जीवन युक्त मनुष्य कहलाते हैं हम में तो उन प्रकृति के अपेक्षा कुछ ज्ञान भी विशेष है तब हमारा धर्म्म है कि हम उन की अपेक्षा कुछ कार्य्य विशेष करें। देखिये हम जिस समय अपनी दृष्टि से महाभारत पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि यदि श्रीकृष्ण-चन्द्र अर्जुन से कर्म न कराते तो उनकी ख्याति तथा अर्जुन की जय न होती और न वे लोग दुनिया में अपना अस्तित्व ही सिद्ध कर पाते। श्रीकृष्ण का नाम इसी लिये आज कल ईश्वर की गणना में माना जाता है कि उन्हों ने अपना अलौकिक शौर्य्य दिखला अर्जुन को उपदेश दिया तथा उसी प्रकार कार्य्य किया और अर्जुन भी वीर इसी लिये कहलाता है कि उसने अपने

निःसीम पराक्रम द्वारा अपना शौर्य्य दिखला कर्म्म द्वारा विजय प्राप्त की, देखो वही पुरुष संसार में विजय पाता है जो कर्म्म करता है।

और यदि वीरवर बालक अभिमन्यु अपना अलौकिक शौर्य्य व्यूह में न दिखाता तो आज हमको उसके नाम लेने की ज़रूरत न पड़ती। यह केवल उसका निःसीम शौर्य्य उसकी याद दिलाता है, नहीं तो अभिमन्यु ऐसे लड़के इस संसार में कई नित्य मरते जाते हैं उनके नाम पर कोई आंसू भी नहीं बहाता। आंसू उसी पुरुष के लिये बहाये जाते हैं जो कर्म्मपरायण हो। हम को बरबश उसी पुरुष को याद करना होता है जो कार्य्य कर अस्तित्व सदा के लिये छोड़ जाता है।

कीर्ति कोई विलग पदार्थ नहीं है वह इसी कर्म्म से निकली है और वह कर्म्म की ही दासी है तथा कर्म्म की ही वह निशानी है। पूजा जगत में आज कल भी उन्ही वीरों की होती है जो अपना अस्तित्व सदा के लिये अमर कर गये हैं, दुनियां में कई मनुष्य मर चुके हैं परन्तु पूजा किसी की नहीं होती हां वे वीर आज कल भी पूजे जाते हैं कि जिनके कर्म्म पूजनीय है। मनुष्य कभी माननीय नहीं हो सकता जब तक कि उसका कर्म्म माननीय न हो मनुष्य और जानवरों में कोई भेद नहीं केवल कर्म्म ही का भेद है।

कई एक जानवर भी ऐसे हो चुके हैं कि जिनके कर्म्म देखकर मैान हो जाना पड़ता है, हमको उन्हें भी पूजनीय कहना पड़ता है। जिस प्रकार महाराणा केशरी प्रताप का चेतक (घोड़ा) जिसने मरते तक इस बहादुरी के साथ, साथ दिया कि जिसकी प्रशंसा लिखना अत्यन्त कठिन है यह केवल उसके कर्म्म का

परिणाम है, जो आज उसकी याद दिलाता है। जिस प्रकार उसने साथ दिया तथा उसने कार्य्य किया यदि इसी प्रकार कोई पुरुष भी कार्य्य करता तो उसकी भी कीर्ति सारे व्योम में फैलने लगती। संसार में कभी कोई किसी का नहीं हो सकता केवल पुरुष का कर्म्म ही उसको उपयुक्त अपने आप उपाधियां प्रदान कर देता है, विना कर्म्म के संसार में चहुं ओर अन्धकार है इस लिये प्रत्येक पुरुष का धर्म्म है कि वह कर्म्म परायण हो।

हम देखते हैं कि कई कायर पुरुष कार्य्य करने से कचुआकर कायरता बश कार्य छोड़ बैठते हैं ऐसा उत्साही पुरुषों को करना उन का धर्म्म नहीं है। हाथ पर हाथ धर कर चुपचाप बैठे रहना पाप है, जो पुरुष बैठा रहता है वह महापातक का भागी है क्योंकि उन के पास जो कार्य्य करने के साधन हैं उन का प्रयोग नहीं होता है और जगत की क्षति होती है। पापी वही कहलाता है जो दुनियां की क्षति करता है और जो सांसारिक नियमों को भग्न करता है। दुनिया के नियमों को भग्न करनेवाला ही पुरुष पापी कहा जाता है। उसी प्रकार अकर्म्मण्य पुरुष भी कर्म्म रहित रहकर जग की क्षति करता है, उस को जो लाभ दुनिया को पहुंचाना था, जो समाज की सेवा करनी थी, वह न कर दुनिया का वृथा अन्न इत्यादि खाकर उस की अवनति करता है। यदि वही आनाज कोई कर्म्मण्य पुरुष उपभोग में लाता तो समाज का कितना उपकार होता, साथ ही साथ वह अकर्म्मण्य पुरुष स्वयम् कुछ सम्पादन तो करही नहीं सक्ता, परन्तु उस के लिये दूसरों को आपत्ति सहकर उस के हेतु उपार्जन कर उस का भरण पोषण करना होता है। ऐसी स्थिति में वह पुरुष जो अकर्म्मण्य रहता है केवल अपनी ही क्षति नहीं कर लेता परन्तु अपने

साथ एक और कर्म्मण्य पुरुष को अपना अनुयायी बना लेता है कि जो उस का भरण पोषण का भार अपने ऊपर लेता है। वह केवल अपने आप को ही क्षति ग्रसित नहीं बना लेता परन्तु और दूसरों को भी हानि पहुंचाता है उस के ऊपर केवल उसी का पाप नहीं रहता परन्तु साथ ही साथ दूसरे का भी पाप उसी के शिर मढ़ा जाता है।

याद रखिये कि दूसरों के भरोसे जीना मरने से भी खराब है अपनी जान रहते हुये दूसरों के मुंह की ओर अपने कार्य्य के प्रति देखना महान कायरता है। दूसरे के सामने भीख मांगने की अपेक्षा मर जाना सब से उत्तम है क्योंकि मनुष्य को मृत्यु से केवल एकही बार प्राण परित्याग करना पड़ते हैं परन्तु भीख मांगनेवाले को दिन रात मांग मांग कर लज्जा के मारे कई बार मरना पड़ता है। उस को दूसरों के बोल सहना पड़ते हैं जो कदाचित मरने की अपेक्षा कई गुणा अधिक बिषम एवम् हृदय विदारक होते हैं। हम देखते हैं कि शब्दों के आघात से पशु तक भयभीत हो जाते हैं और मनुष्य की आज्ञा के अनुयायी हो जाते हैं परन्तु हमें अकर्म्मण्य पुरुषों के प्रति अवश्य खेद है जो बातों की आघात से भी नहीं पसीजते क्या ऐसी अवस्था में वे मनुष्य कहाने के अधिकारी बन सक्ते हैं कि जिन के कार्य्य पशु से भी घृणित होते हैं।

—०

स्वावलम्बन ।

भूख से मरता वही जो और के बल नाचता ।
जो पेट भरने के लिये भी और को जा याचता ॥
बन कर स्वावलम्बी जगत में नर जो न करता कर्म्म है ।
मैं पूछता हूं पाठको ? क्या मनुज का यह धर्म्म है ॥
कर्म्म अपने बल करो क्या और का मुख ताकते ।
धिक्कार है जो मनुज होकर दीन बाणी भाषते ॥
बन जाव स्वावलम्बी जगत में कुछ नहीं दुःसाध्य है ।
कठिन से भी कठिन जो हो सरल है औसाध्य है ॥

प्रत्येक पुरुष को स्वावलम्बी होना चाहिये परन्तु स्वावलम्बी वही मनुष्य रह सक्ता है जो कार्य्य करने से अपना पद पीछे नहीं हटाता । स्वावलम्बन शब्द उसी पुरुष के लिये व्यक्त किया जायगा जो अपने भरोसे रह कर सदैव कार्य्य करने में प्रवृत हो और जिस की कार्य्यवाही कर्म्म बल पर चल रही हो । टूटे घर में बैठ कर महलों के सपने देखनेवाले पुरुष कभी सुखी नहीं रह सक्ते ।

यह जीवन स्वासाओं के आधार पर बना है परन्तु स्वांस लेना एक प्रकार का आभ्यन्तरिक कार्य्य है तब उस का बाह्य कार्य्य कर उस का सदुपयोग क्यों न किया जाय, इस लिये यदि सुखी रहना चाहते हो तो अपने पैरों खड़े रहो दूसरों के आधार

पर मत खड़े हो। यदि तुम जिस के सहारे खड़े हो वह गिर जायगा तो तुम्हें वरवश उस के लिये गिरना होगा, अपनी इच्छा एवम् मनोकामना की कभी पूर्ति न कर पावोगे। संसार में वह सब से श्रेष्ठ बल है जो अपना है दूसरों का बल अपने काम में आये न आये। सम्भव है कि दूसरे कभी अपना बल आप को न दे सके। इस लिये याद रखिये कि आप अपने ही बल पर खड़े रहने का प्रयत्न करें, यदि आप अपनी स्वतन्त्र इच्छायें रखते हैं तथा यदि आप के हृदय में किसी भी कार्य्य सिद्धि की कामना है तो आप केवल अपने ही भरोसे कार्य्य परायण रह कर कार्य्य सिद्धि की ओर प्रवृत्त हो जाइये।

हम यह मानते हैं कि भीख मांगना भी एक प्रकार का कार्य्य है परन्तु विचारिये तो कैसा परबशता एवम् पराये निहोरे कराने हारा कार्य्य है। हम को कैसी दीनता के साथ अपनी रोती सूरत बनाना पड़ती है, हम को परबश दूसरे को देख रोना पड़ता है, वृथा आडम्बर बनाने पड़ते हैं। क्या ऐसे अपकर्म्म को भी कोई सराहनीय कह सक्ता है कि जिस्में आत्मगौरव का लेश भी न हो और की बातों पर नाचना पड़े तथा गालियों पर गाकर बताना पड़े, दुतकारने पर पांव पड़ना पड़े। क्या कोई भी पुरुष ऐसा इस संसार में होगा कि जिस की आत्मश्लाघा इस प्रकार हीनता पर प्राप्त हो चुकी हो। यदि वास्तव में ऐसे भी जीवित निर्जीव पुरुष प्रस्तुत हैं तो उन के विषय में अधिक लिखना भी पाप है। क्योंकि उन को लिखने से कोई असर नहीं हो सक्ता कि जिन के हृदयांकुर पहले से मुर्झा चुके हैं कि जिन में स्वावलम्बन की मात्रा शेष नहीं है। अकर्म्मण्य पुरुषों को जरा विचार करना चाहिये कि उन के भी वही हाथ, पैर हैं जो औरों

के हैं और जो दूसरों को अपने पेट, तथा आप के भी पेट के लिये कैसी २ कठिन कोशिशें करनी पड़ती हैं। हम यह जानते हैं कि कदाचित मांगनेहारे उन कर्म्मण्य पुरुषों की अपेक्षा अधिक प्रयत्न करते हों, परन्तु उन का ऐसा करना समाज के समक्ष कोई पदार्थ नहीं है और जब उन के कर्म्मों की गिनती ही समाज में कोई नहीं है तब उनका कार्य्य करना सदा निरर्थक है। निष्प्रयोजन हाथ हिलाना भी कार्य्य माना जा सक्ता है परन्तु जब उस को समाज में कोई गणना हो नहीं तब उन का कार्य्य करना किसी प्रकार का नहीं हो सक्ता, इस लिये कर्म्मवीर बनो और भीख मत मांगो। इस जिल्लत के कार्य्य का परित्याग करो देखो समाज कैसा आदर करने लगती है अभी जो भगाती है वही पीछे अपनी बराबरी का सन्मान देने लगेगी अभी जो समाज को देख कर अपनी गर्दन नीची हो जाती है वही अपने पैरों खड़े रहने से अपनी छाती ऊपर को उभर आयेगी। आज अपना जो सलाम करते हैं तो कल स्वावलम्बी बनते ही दूसरों को तुम्हें सलामें झाड़ना होगी, परन्तु बात केवल स्वावलम्बी बनने की है।

इस से यह न समझ लेना चाहिये कि जिस को सहायता की आवश्यकता हो उस को मदद न देनी चाहिये। यह कर्म्मक्षेत्र जग है, यहां प्रत्येक प्राणी इसी लिये पैदा होता है कि वह कार्य्य करे और अपना उपकार करे और साथ में दूसरों का भी। जग में वही मनुष्य है तथा उसी में मनुष्यत्व है जो औरों को सहायता तथा सुख पहुंचाये। परोपकार से अपना भी भला है, किसी को दाम देते समय कितना हर्ष होता है। चित्त प्रसन्न हो कर बल को बढ़ाता है और हृदय को पवित्र करता है जिस को सहायता पहुंचाई है उस के हृदय से आप के लिये भलाई की कामनाओं की

किरणें बिस्तृत होती हैं परन्तु लोगों का केवल उपदेश देना परोपकार नहीं।

आप जिस प्रकार के हो उसी प्रकार का रूप लोगों के सामने रखियेगा, आपकी बात संसार में जभी मानी जायगी जब आपकी कृति लोगों के सामने प्रस्तुत होगी। याद रखिये बात उसी की मानी जाती है जिसकी कृति होती है। यदि आप चिल्ला कर उपदेश करेंगे तो सब आदमी आप का अनुकरण कर आप सरीखे चिल्लाने लगेंगे और तमाम शोर हो जायगा क्योंकि वे लोग आप को चिल्लाते हुये अवलोकेंगे और आप ही के अनुयायी हो जांयगे इस लिये आप को चाहिये कि आप अपने कार्य्य को पूर्ण ग्रहण कर तथा उसको योग्य बना करके दिखलाइये बिना परीक्षित उपदेश कभी उपदेश नहीं कहा जा सकता। अपने उद्देश्यों को पहले सिद्ध कर फिर अपने विचार लोगों पर व्यक्त कीजिये तब आप की बात मानी जा सकती है अन्यथा नहीं अब आगे चलिये और मृत्यु से बचिये। रात, दिन प्रयत्न कर अपनी शक्तियों को जीवित रखना भी प्रत्येक पुरुष का धर्म्म है, प्रत्येक पुरुष को चाहिये कि अपनी शक्तियों को सदा जीवित रक्खे क्योंकि कतिपय प्रत्येक शक्ति तभी जीवित रह सकती है जब उनका सदा उपयोग लिया जाय। जहां तक देखते हैं वहां तक शक्तियों की वृद्धि तभी हैं जब उनका सतत् उपभोग लेते रहते हैं ऐसी अवस्था में जो अपने आप को चिरञ्जीवी बनाना चाहता हो उसका धर्म्म है कि वह उसका उपभोग करे। इस लिये मुर्दों की तरह मत बैठ रहो नहीं तो वास्तव में वैसे ही बन जावोगे।

दुनिया में कोई एक क्षण के लिये भी विश्राम नहीं लेता, आप यदि एक क्षण का सौवां अंश भी मांगे तब भी नहीं पा

सकते और यदि ऐसे क्षण का उपभोग करना भी आप अपना धर्म्म नहीं समझते तो यह आपकी बुद्धिमत्ता है । ऐसे क्षण को खो देना अपना धर्म्म नहीं कि जिस पर बड़ा भारी भार निर्भर है । आप किसी घड़ी से कोई उसके समय का अंश मांगिये वह कभी न देगी वह आप की आप अपने टिक् २ शब्द द्वारा कट कट काटती जाती है उसे आप की परवाह नहीं; परन्तु आप का धर्म्म है कि आप उसकी चिन्ता करें क्योंकि संसार का धर्म्म है कि जो अपनी नहीं सुनता और अपने से बड़ा होता है उसकी अपने को सुनना चाहिये । इस लिये अपने कार्य्य की सूझ आप स्वयम् अपने आप कीजिये तभी सफलता मिल सकती है । याद रखिये विना अपने मरे स्वर्ग नहीं मिल सकता, यहां यह मसल कभी की प्रचलित एवम् प्रख्यात है । तब क्या अपने हाथ ही पर हाथ धरे बैठे रहें ? कदापि नहीं स्वावलम्बी बनिये और अपना कार्य्य अपने हाथ कीजिये ।

संसार का दूसरा पर्य्यायवाची शब्द "जग" है जिस का अर्थ जाग्रत, सावधान तथा होशियार आदि है और यह नाम इस लिये रक्खा गया है कि जिस का अर्थ, मनुष्य जीवित रहे तब तक न भूले । प्रत्येक मनुष्य को जग शब्द का यथार्थ मतलब सदा मालूम रहना चाहिये । यहां वही मनुष्य जीवित है जो जग के नाम को सार्थक करता है । यदि कोई पुरुष ऐसा नहीं करता तो उसे इस जग में जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं और न उस के लिये ज़रा सी भी जगह इस जग में नीति के अनुसार प्राप्त हो सक्ती है । जगते रहना तथा सावधान रहनाही जग में रहना है अन्यथा जीना भी मरना है ।

देखो तो जो सुख की नींद सोता है उसे पहले कर्म्म रत रहना पड़ता है और उसी को नींद भी सुखदायक आती है जो

काय्य करता रहता है बेकार को तो नींद भी बराबर नहीं आती उन को तो जागते ही दिन रात व्यतीत करना होता है और यदि नींद आती भी होगी तो सो भी आधी। वे सारी रात स्वप्नों घोर यंत्रणा में रैन बिताते होंगे, उन का दिन और रात दोनों एक ही समान व्यतीत होता होगा। नींद उन लोगों का साथ छोड़ देती है जो कर्म्म विहीन होते हैं, उन को रात्रि भी अशान्ति से व्यतीत करना होती है जो दिन को निठल्ले बनकर हँसी ठठोली में अपना समय व्यतीत कर देते हैं। इसी लिये प्रत्येक पुरुषों का धर्म्म है कि वे कार्य्य परायण बनें। दुनियां के सारे सुख कर्म्मण्य पुरुष के लिये बने हुये हैं, तब भला अकर्म्मण्य पुरुष कैसे सुख की नींद सो सक्ता है। "कदापि नहीं"। वह ऐसे महान सुख का बिलासिता तभी बन सकता है जब वह कर्म्मपरायण बन ले। यदि नींद का अपूर्व आनन्द पाना है तो कार्य्य में रत हो जाइये और अलौकिक मौज उड़ाइये।

भाग्य ।

भाग्य पर जो हाथ रख कर बैठ जाता है यहां।
उस के लिये वह सफल फल है स्वप्न में रक्खा कहां ॥

वह आप से ही आप जग में दुःख सह मर जायगा।
जो भाग्य के केवल भरोसे जगत में रह जायगा ॥

कर्म्म करता है उसी को सौख्य सारी ठौर है।
इस जगत में कर्म्म की ही चाहना चहुं ओर है ॥

भाग्य जग में कुछ नहीं है कर्म्म का सब मर्म्म है।
इस ओर देखो कर्म्म है उस ओर देखो कर्म्म है ॥

अब संसार में एक सब से बड़ा कर्म्म का खण्डन करने वाला भाग्य है। इस का समर्थन इस संसार के अकर्म्मण्य नर किया करते हैं, क्योंकि ऐसा करने से उन को यथेष्ट समय दुःखमय सुख की नींद सोने को मिलता है। वास्तव में भाग्य संसार में कोई वस्तु नहीं है यह केवल कर्म्मविहीन मनुष्यों के लिये आश्रय पाने का आश्रयागार है, रोते पुरुषों को आंसू पोछने के लिये एक रूमाल है। इस का आश्रय वेही अज्ञानी जन लेते हैं कि जो अपना हाथ नहीं उठा सक्ते, जिन का पेट पीठ एक हो चुका है, जो अकर्म्मण्य रह कर अपना सर्वस्व खो बैठे हों, जो इस संसार में पतित हो चुके हैं। भाग्य के बल पर कभी कुछ हो नहीं सक्ता। इस संसार में जो पुरुष जितना कार्य्य करता है उस को उतना ही सुख तथा दुःख

मिलता है। न्याय शास्त्र कहता है कि जिस की जैसी प्रकृति उस को उसी प्रकार दण्ड मिलैगा। वह भाग्य की ओर नहीं देखना चाहता और न उस के यहां भाग्य कोई वस्तु ही हो सक्ती है।

मनुष्य चाहे जितना भाग्य का समर्थन करे परन्तु वह सदा परास्त ही होगा। भाग्य ऐसा विषय नहीं है कि जिस्मे मनुष्य को सफलता हो सके। भाग्य के भरोसे जितने मनुष्य रहे हैं उन को विषाद मान अन्त में क्रन्दन करना पड़ा है। आज तक भाग्य के भरोसे बैठकर किसी ने भी जय न पाई। उदाहरणार्थ पाठकों की सेवा में एक छोटा सा किस्सा प्रस्तुत कर इस विषय का सार्थक मर्म खोल कर रखने की चेष्टा करना चाहता हूं इस किस्से मे पाठक स्वयम् भाग्य के सार्थक मर्म को भली भांति जान लेंगे।

एक राजा के पास दो मनुष्य विवाद करते हुये पहुंचे, एक उस में भाग्यवादी दूसरा कर्म्मवादी था राजा ने थोड़ी देर तक तो उन के प्रश्नों का उत्तर दिया तथा उन दोनों का विवाद भी सुना परन्तु जब दोनों को अपने २ विषय का बलाढ्य अनुयायी पाया तब राजा ने उन दोनों को एक कमरे में बन्द कर देने की आज्ञा दी तथा वे दोनों एक कमरे में बन्द कर दिये गये।

उस कमरे में बहुत दिन पहले राजा के मेहमान आकर ठहरे थे उन के साथ एक रसोइया भी था उस ने सब को मिठाई खिलाने के अनन्तर बची हुई मिठाई एक दीवार की दरार में छिपा कर इसलिये रख दी थी कि उस को वह चलते समय अपने साथ ले जाय परन्तु वह जाती समय भूल गया था।

भाग्यवादी पुरुष तो इस कमरे में पहुंचते ही एक स्थान में जाकर चुपचाप बैठ गये, परन्तु कर्म्मवादी पुरुष अपने उद्देशानुसार उस कमरे को चारों ओर से देखने लगा। उस को भली

भांति नीचे से ऊपर तक देखने के पश्चात् वह एक कोने से दूसरे कोने में घूमने लगा तथा वह उस कमरे के सारे ताख, दीवार आदि पर बड़ी सावधानी से हाथ डाल २ एवम् हाथ फिरा २ टटोलने लगा। कभी छत पर चढ़ जाता कभी फिर नीचे उतर आता। इसी प्रकार उस ने तमाम कमरे को देख डाला इतने में उस की निगाह उस दरार पर पड़ी जहां मिठाई रक्खी हुई थी, हाथ डालते ही उस को वह मिल गई। अब तो उस की प्रसन्नता का पारावार भी न रहा वह एक दम उछल पड़ा। अपने कार्य्य की सिद्धि में किस को अगाध प्रसन्नता नहीं होती है। कौन अपने अभीष्ट सिद्धि पर फूल न जाता हो, किस को ऐसे समय प्रसन्नता न व्याप्त होती हो।

अब तक भाग्यवादी पुरुष उसी कोने में बैठे हुये यह सारी घटनायें देखते थे। उन का केवल यही सिद्धान्त था कि जो कुछ भाग्य में होगा वही होगा, परन्तु कर्म्मवादी पुरुष का यह उद्देश था ही नहीं। उस का उद्देश्य कर्म्म करना था वह एक दम प्रफुल्लित हो मिठाई ला या और अपने साथी भाग्यवादी पुरुष के पास जाकर बोला कि मित्र? यह लो यह मिठाई मैं ने अपने प्रयत्न द्वारा सम्पादन की है इसे आप भी ग्रहण कीजिये। क्योंकि जिस प्रकार मैं भूखा हूं उसी प्रकार आप भी भूखे होंगे। परन्तु भाग्यवादी पुरुष इस बात पर चिढ़ गये और बोले कि यदि हमारे भाग्य में होगी तो मिठाई स्वयम् अपने आप मेरे मुँह में आजायगी अर्थात् कोई मेरे मुँह में डाल देगा मैं अपने सिद्धान्त को थोड़ी सी क्रिया कर भग्न नहीं करना चाहता।

यह सुन कर कर्म्मवादी पुरुष थोड़ा सा झुँझलाया और मिठाई खाने लगा परन्तु फिर उस ने अपने मन में विचारा कि लाओ, इस बिचारे ग़रीब के मुँह में ही डाल दें आखिर यह

अपना साथी ही है इस की कोई चिन्ता नहीं यदि मेरा सिद्धान्त भग्न होता है तो। यह सोच कर उस ने उस के मुँह में भी डाल दिया फिर क्या था भाग्यवादी पुरुष बड़े आनन्द से खाने लगे, अपने सिद्धान्त की सिद्धि देख फूले न समाये; परन्तु उन को खाते देख कर्म्मवादी पुरुष ने एक दम उन का मुँह पकड़ लिया और दबा कर बोला कि महाशय आप खाने की क्रिया तो अब न कीजिये भला आप मेरे उद्देश को कैसे ग्रहण किये लेते हैं। आप अब क्यों क्रिया करने लगे यदि यह खाना आप के भाग्य में होगा तो वह स्वयम् आप के पेट में प्रवेश पा जायगा आप थोड़ी देर के लिये कर्म के फेर से बचिये और इस खाने की क्रिया से परे रहिये। क्या यही आप का उद्देश है जो दूसरे के उद्देश पर अवलम्बित हो।

भाग्यवादी महाशय का मुंह तथा गला दबा हुआ था वे बड़ी धीमी तथा कर्कश स्वर से बोले कि "भाई अब आप मुझ को क्षमा कीजिये मैं अब आप के सिद्धान्त को मानने लगा मेरा सिद्धान्त आप के समक्ष कोई वस्तु नहीं है आप का सिद्धान्त ही सर्वोत्तम है। बिना आप का कर्म्मरूपी सिद्धान्त माने जगत् का कोई कार्य्य नहीं हो सक्ता आज मैंने कर्म्म के मर्म को जान लिया," यह कह दोनों ने अपना फैसला अपने आप कर राजा से विदा मांगी।

प्रिय पाठको ! देखिये कर्म्मवादी पुरुष ने स्वयम् अपना पेट तथा एक दूसरे का पेट भरा और वह यदि अपने हाथ पर हाथ धर कर एक कोने में भाग्यवादी पुरुष की तरह बैठा रहता तो वह कभी अपना भी पेट न भर पाता और न अपने सिद्धान्त को ही सिद्ध कर पाता वहां दोनों की जानों के लाले पड़ते।

हमारा कहना है कि भाग्यवादी पुरुष साधारण खाना पीना

आदि क्यों करते हैं तथा एक दूसरी जगह से क्यों जाते आते हैं यदि उस के भाग्य में जाना आना तथा खाना पीना लिखा होगा तो वह आप से ही आप हो जायगा। यदि वे भाग्य ही का भरोसा किये रहें तो उन को भूखा मरना पड़े। उन का कहीं निर्वाह न हो भाग्य का बहाना केवल कायर के लिये काम आता है भाग्य के भरोसे जो रहता है वह यदि भूखा भी मर जाय तो कोई आश्चर्य्यजनक बात नहीं है।

हमें कई पुरुष यह कह कर भाग्य की महिमा बढ़ाते हैं कि यदि कर्म्म करने पर भी जो कार्य्य सफल न हो तो उसे हम क्या कहें। यदि हमने सतत परिश्रम किया हो और तब भी सफलता न प्राप्त हुई हो तो हम उसे क्या कहें? उन से हम कहते हैं कि वे जरा विचार कर देखें उन्हें उन के कार्य्य करने में अवश्य त्रुटि मालूम हो जायगी, बिना किसी त्रुटि के कर्म्म कभी अधूरा नहीं रह सक्ता। कार्य्य की सिद्धि के लिये सतत एवम् संयम के साथ कार्य्य करने की बड़ी भारी आवश्यक्ता है, यदि पूर्ण दक्षता के साथ कार्य्य किया जायगा तो वह कदापि असफली भूत नहीं हो सक्ता। जगत में असम्भव कोई वस्तु नहीं है। यदि यह असम्भव शब्द संसार की भाषाओं के कोष से निकाल दिया जाय तो कोई हानि नहीं हो सक्ती। हां! हम यह मानते हैं कि पुरुष त्रुटियों के कारण एक दम सफलता प्राप्त करने में कदाचित् असफलीभूत हो परन्तु उस को एक दम हताश होकर बैठ रहना उस का धर्म्म नहीं। मनुष्य को चाहिये कि वह कार्य्य सिद्ध के लिये निरन्तर यत्न करता रहे। देखें वह कब तक सफलता नहीं पासक्ता है यदि वह सदा कार्य करेगा तो सफलता उस के पैरों लोटती फिरेगी। मन लगाकर संयम, नियम से कार्य्य कीजिये कभी आप का पथ कहीं रुद्ध न होगा। आलसियों के लिये संसार में कभी सफलता नहीं हो सक्ती।

धर्म्म तथा कर्त्तव्य ।

कर्म्म करने के प्रथम, कर्त्तव्य अपना जान लो ।
धर्म्म से औ न्याय से, क्या ठीक है यह ठान लो ॥
फिर करोगे कर्म्म जो, तो, फिर न तुम पछतावगे ।
उन्नत स्वयम् होजावगे, औ जय जगत में पावगे ॥
कार्य्य करने के प्रथम, कर्त्तव्य जो नहिं जानते ।
धर्म्म क्या है न्याय क्या है जो नहीं कुछ मानते ॥
ठोकरें खाते वही हैं, सफलता पाते नहीं ।
फिर वृथा वे शोक करते, फिर न कुछ पाते कहीं ॥


र्म्म का विषय बड़ा गम्भीर है, इस को समझना आसान नहीं है, यह इतने प्रकार का हो सक्ता है। जितने कि वस्तु संसार में हैं और फिर जितनी कि उन की अवस्थायें हैं। धर्म्म का सर्वव्यापक लक्षण यह हो सक्ता है कि जो जिस का जिस समय आधारभूत है वही उस का धर्म्म है। अर्थात् सृष्टि को स्थिर रखने वाला जो कुछ है वह उस का धर्म्म है। मनुष्य को अपनी शुद्ध अवस्था में रखनेवाली वस्तु जो है वह उस का धर्म्म है; इसी प्रकार जीव, जन्तुओं को अपनी अवस्था में स्थिर रखनेवाली जो क्रियायें हैं वे उन का धर्म्म हैं।

इस से यह सिद्ध होता है कि धर्म्म वह वृत्ति आचरण है जो लोक व समाज की स्थिति को ठीक रक्खे। धर्म्म वह आचार

है जिस से समाज की रक्षा और सुख, शान्ति की वृद्धि हो। धर्म्म वह कर्म्म है जिस का करना किसी संबन्ध, स्थित या गुण विशेष के विचार से उचित और आवश्यक हो। वह कर्म्म वा व्यापार जो समाज के कार्य्य विभाग के निर्वाह के लिये आवश्यक और उचित हो। वह काम जिसे मनुष्य को किसी विशेष कोटि वा अवस्था में होने के कारण अपने निर्वाह तथा दूसरों की सुगमता के लिये करना चाहिये। किसी जाति, कुल, वर्ग, पद इत्यादि के लिये उचित ठहराया हुआ व्यवसाय या व्यवहार। कर्त्तव्य फर्ज जैसे ब्राह्मण का धर्म्म। क्षत्रिय का धर्म्म। माता पिता का धर्म्म पुत्र का धर्म्म इत्यादि। कर्म्म परायण मनुष्य का धर्म्म यह है कि अपने कार्य्य से काम रक्खे कार्य्य करने के पूर्व अपने अधिकार अथवा सत्य पर अवश्य विचार कर ले और असत्य पर कभी हस्ताक्षेप न करे।

प्रत्येक कार्य्य आरम्भ करने के पूर्व यदि मनुष्य विचार करे तो उस के हृदय में दो तरह की अनुमतियें उत्पन्न होंगी। एक तो निषेध बाधक और दूसरी कर्तृ बोधक, एक से कार्य्य करने का नकारा उत्पन्न होता है और दूसरे से हकारा। जब ऐसे दो विचार मनुष्य के हृदय में उत्पन्न होते हैं तब तो मनुष्य को पूर्ण रूप से विचार करना चाहिये कि उस कार्य्य की सिद्धि में कितना उस का सत्व है और कितना असत्व, यह विचार द्वारा सिद्ध कर लेना चाहिये। यदि उस कार्य्य में उस का पूर्ण अधिकार हो तो उस कार्य्य को अपना कर्त्तव्य जान लेना चाहिये और यदि उस कार्य्य में उस का किञ्चित भी अधिकार न हो तो उस के करने में प्रवृत्त न होना चाहिये। परन्तु हां यदि थोड़ा बहुत भी उस का न्याय रूप से अधिकार पहुंचता हो तो उस का धर्म्म है कि

जहां तक उस न्याय की दौड़ हो वहां तक उस के सिद्धि का कर्त्तव्य करे, ऐसा करना अन्याय न होगा।

जिस प्रकार एक वस्तु आप की है और उस पर एक आप के पड़ोसी ने अपना सत्व दिखा अन्याय से ले लिया है और वह उसे नहीं देना चाहता तो उस का सम्पादन करना आप का धर्म्म है उस को छोड़ देना कायरता है। जहां तक आप का वश चले वहां तक उस के लेने की कोशिश करना चाहिये, अपनी वस्तु बृथा किसी के हाथ चली जाने देना योग्य नहीं है। ऐसा करने में यदि अपने स्वजनों का भी प्राण हतन करना पड़े तो कोई क्षति की बात नहीं है। जैसे कि कौरव, पाण्डवों का युद्ध। ऐसे अवसर पर मनुष्य का धर्म्म है कि न्याय से जहां तक हो सके वहां तक उसे लेने का प्रयत्न करे यदि ऐसे समय में अपनी जान की भी बारी हो तो उसके लिये भय करना बृथा है। क्या अपनी वस्तु पर औरों का अधिकार करवा देना मनुष्यों के लिये श्रेष्ठ है? कदापि नहीं अपना अधिकार यदि मर कर भी लेना पड़े तो कोई भय की बात नहीं है। न्याय परायण पुरुष को सदा मैदान में डट कर लड़ना उस का परम धर्म्म है, ऐसे पुरुष को निर्भय हो युद्ध करना चाहिये कि जिस का न्याय समर्थन करता है।

यह मनुष्य जीवन फिर बार २ नहीं मिलनेवाला है इस जीवन का यही सार है कि यह न्याय के पीछे तथा सत्यता के पीछे जहां तक हो सके वहां तक भिड़ने का यत्न करे। जीवित वही पुरुष है जो अन्याय के रोकने के लिये अपने प्राणों को भी कुछ नहीं समझता। अपने ऊपर बलात्कारियों द्वारा कुकर्म करवाते रहना और अपयशी होना घोर नरक में जाने के समान है। जिसकी कीर्ति क्षय पा चुकी है उसका जीवन केवल कडुवी तूमड़ी के

समान है कि जो खेत में पैदा होकर वहीं उसको सूख जाना पड़ता है और उसके फल को कोई ग्रहण नहीं करता । यदि अन्याय से कोई मनुष्य कुचला जा रहा हो तो न्याय परायण पुरुष का धर्म्म है कि वह उसकी सहायता करे । याद रखिये ईश्वर उसी की सहायता करता है और उसी के पक्ष में रहता है जो औरों को न्याय युक्त सहायता देता है । वही जयी होता है जो न्यायानुसार अपने आचरण बनाता है उसकी कभी हार नहीं हो सकती, और तिस पर भी यदि उसकी अमानुषिक शक्ति द्वारा तथा अन्याय की शक्ति द्वारा यदि वह पराजित भी हो गया हो तो उसको भय न करना चाहिये उसका धर्म्म है कि जहां तक हो सके अपने कर्त्तव्य का पालन करे और तिस पर भी यदि पराजित हो जाय तो उसको भय न करना चाहिये । अमानुषिक शक्ति द्वारा अथवा अन्याय की युक्ति द्वारा यदि वह हार गया तो वास्तव में उसकी हार नहीं मानी जा सकती, हारा वही माना जायगा जो अन्यायी है, तथा अपना कर्त्तव्य नहीं जानता। उसकी अमानुषिक शक्ति द्वारा उसने चाहे भले ही जय प्राप्त किया हो, परन्तु उसका समर्थन कोई भी न करेगा । और यदि कोई अन्याय के कृति का भी समर्थक बनता है तो ऐसा समर्थक स्वयम अन्यायी है तथा न्यायानुसार वह दण्ड का भागी माना जा सकता है अन्यायी की जय वास्तव में जय नहीं है।

प्रत्येक पुरुष के हृदय में विचार करने की एक नैसर्गिक कल है जिस को मानव जाति "मन" कहतो है यह एक ऐसी कल है कि जिस पर प्रत्येक कर्त्तव्या कर्त्तव्य का विचार करने से वह एक दम कह देती है, उसका यही धर्म्म है कि वह सदा मनुष्य के कर्म्म को तौला करती है । वह सदा मनुष्य को उसके अपकर्म्म पर ऐंचा करती है और सुकर्म्म पर उसकी मन ही मन जय जयकार

कहा करती है । स्वकर्म्म से हृदय में एक प्रकार का हर्ष श्रोत बहता रहता है तथा अपकृति पर धिक्कार का दुर्गन्ध युक्त पनारा बहा करता है।

ऐसी स्थिति में यदि जिसका मन ही उसका समर्थक नहीं है तब तो वह कर्म्म करने का वास्तव में अधिकारी नहीं हो सकता और तिस पर भी यदि वह ऐसा कर्माकर्म करता है तो वह अन्यायी ही है जब कि उसका मन ही उसकी ओर नहीं है तब उसकी कृति कैसे उसकी ओर हो सकती है । यह मन तथा मनन करने की कल प्रत्येक मानव जीव के हृदय में अखण्ड रूप से निवास करती है परन्तु उस मन को भी तुलना करने की बान होना चाहिये और वह प्रत्येक पुरुष में उसकी योग्यतानुसार रहती है । जितना मनुष्य कार्य्य करता है उतना ही वह सदा तौला करती है और इसी तौल के अच्छे विचार को मनुष्य विचार कहते हैं। इस विचार के भी दो भाग हैं उन में से एक का नाम सद्विचार और दूसरे का दुर्विचार कि जिनको पहले ही कर्म्म अथवा अकर्म्म कह कर कहा गया है । अब यहां केवल इतनाही कहना श्रेयस्कर होगा कि मनुष्य केवल उन्हीं कर्मों को ग्रहण करे कि जो सद्विचार द्वारा योग्य प्रमाणित हो चुके हों और जो दुर्विचारों द्वारा सिद्ध होते हों उनका परित्याग करे।

कभी भूल कर भी अन्यायी की बातें न सुनो, कभी २ भूल से भी अन्यायी की चाल उक्त बातें सुन न्यायी का मन बदल जाता है। अपने विचारों को पवित्र रक्खो और कभी भूल कर भी गन्दी बातों का अपने हृदय में संचार न होने दो और न कभी उनको सुनो। कभी २ प्राय: ऐसा भी देखा गया है कि सुनने से भी बहुत भारी परिवर्तन हो जाता है । मनुष्य का मन भी एक प्रकार से कांच के समान है कि जो सदा जिस प्रकार की बातें

सुनता है उसी प्रकार की उसके मन में भावनायें पैदा होने लगती हैं। जैसे कांच में जिस प्रकार का आदमी अपना मुंह देखता है उसी प्रकार का वह उसे उसका स्वरूप बना देता है और अपने हृदय को कलुषित बना लेता है। कुछ न कुछ सुनी हुई बात का प्रभाव मनुष्य के हृदय में पड़ता ही है और विचारों का परिवर्तन भी किसी न किसी अंश में अवश्य हो जाता है ऐसी स्थिति में प्रत्येक पुरुष का धर्म्म है कि वह या तो ऐसी बातें न सुने अथवा विनयन द्वारा अपने मन को इस प्रकार योग्य बना ले कि वह एक दम बुरे अथवा भले कार्य्य तथा अन्यायों की बात को जान ले कि जिस से उस को धोखे में पड़ने का अवसर न मिले।

जगत में सदा कार्य्य कर एक से दूसरा आगे बढ़ता ही जाता है सब एक दूसरे का शिर मौर है। जगत में कार्य्य के सन्मुख कोई किसी की चिन्ता नहीं करता, कार्य्य कर्त्ता पुरुष को तथा जयी पुरुष को अकर्मण्य रह वृथा हिंसा के गाल में नहीं पड़ना चाहिये क्योंकि हिंसा धर्म्मानुसार आदमियों से सदा हुआ करती है। हम एक २ पैर पर भी कभी २ हिंसा किया करते हैं परन्तु वह वास्तव में हिंसा नहीं है। जैसे, एक वस्तु आप ने किसी को मांगे दी अथवा उसने और किसी मिस से उस पर अपना अधिकार जमा लिया हो और वह नहीं देना चाहता हो तो उस से उस वस्तु का लै लेना अपना धर्म्म होगा। यदि ऐसे समय में कोई हिंसा भी हो जाय तो वह धर्म्म के कारण कभी हिंसा में नहीं माना जा सकता है। जिस प्रकार कौरव पाण्डव का युद्ध। परन्तु कार्य्य करने के पूर्व भली प्रकार धर्म्म अधर्म्म का विचार कर ले, एक दम किसी कार्य्य को मत कर डालो नहीं तो पछताना पड़ेगा। न्यायाधार से जान लो कि जो कार्य्य आप करते हैं उस पर आप का कहां तक अधिकार है। यदि न्यायानुसार आप का अधिकार

नहीं है और आप उसको करना चाहते हैं तो बस. यही हिंसा है और यही अन्याय है। परन्तु यदि न्याय द्वारा यह सिद्ध हो जाय कि अमुक कार्य्य करना अपना धर्म्म है तो फिर कोई चिन्ता की बात नहीं, फिर चाहे कुछ ही होती रहे इसका कोई विचार नहीं और न ऐसा करना अन्याय ही हो सकता है।

हिंसा कई प्रकार की होती है, केवल किसी मनुष्य का हनन करना मात्र हिंसा नहीं है। किसी का मन दुखाना भी हिंसा मानी जा सकती है और यदि अपनी थोड़ी सी भी उन्नति करे तो तब भी किसी न किसी प्रकार एक दूसरे के मन पर आघात होता ही होगा, एक दूसरे का मन दुखता ही होगा। अपनी उन्नति देख दूसरे अवश्य दुःखमयी होते ही हैं और उनका दुःखित होना भी हिंसा हो सकता है, जब ऐसी स्थिति है तब क्या अपने को अपनी उन्नति भी न करनी चाहिये।

संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो बिना पुरुषार्थ के मिल सके, पुरुषार्थ यही सारी बस्तु है। परन्तु इस का प्रयोग बड़ी सावधानी से करना चाहिये, जिस पुरुष में पुरुषार्थ नहीं है वह वास्तव में मनुष्य नहीं है वह कुछ नहीं कर सकता। बिना पुरुषार्थ के आप एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सक्ते हैं, पुरुषार्थ ही मनुष्य का एक विशेष गुण है। दुनियां में कोई किसी को वस्तु मांगने से नहीं देता वह केवल पुरुषार्थ ही से मिल सक्ती है। यदि न्यायानुसार किसी बस्तु पर आप का अधिकार है तो आप का धर्म्म है कि आप उस को ले लें।

संसार में कल और बल दोनों की बड़ी भारी आवश्यकता है कई बस्तुयें ऐसी हैं जो कल से मिल सक्ती हैं और कई बल से। जहां कल की आवश्यकता है वहां पर उसी का प्रयोग कर अपना

कार्य्य साधन करना चाहिये और जहां बल का वहां बल। सारांश यह है कि मनुष्य को जिस प्रकार अवसर मिले कल से यथा बल से अपना कार्य्य सिद्ध कर लेने में कोई अधर्म्म नहीं हैं परन्तु कार्य्य न्याय युक्त हो। जिस कार्य्य की सफलता के हेतु वह कार्य्य में परिणित हो छल, बल कर रहा है वह न्यायानुसार हो और उस का उस पर पूर्णरूप से अधिकार हो तो उस को किसी प्रकार भी सिद्ध कर लेना अन्याय नहीं होगा। परन्तु इस के विरुद्ध कार्य्य कर लेना सर्वथा अन्याय होगा तथा विधर्म्म कहलायेगा, जिस प्रकार का कार्य्य हो उसी प्रकार की शक्ति लगावो। जहां तक अपना कार्य्य सरलता मे हो सके वहां तक उस के विषय में अधिक प्रयत्न करना भी एक प्रकार से अधर्म्म कहा जा सक्ता है। जिस प्रकार कि आप का कुछ रुपिया एक से पाना है और आप उस से बिना पहले मांगे यदि आप एक दम उस से मारपीट करने लगेंगे तो वह सदा अन्याय माना जायगा तथा अधर्म्म कहलायेगा। ऐसी स्थिति में प्रत्येक पुरुष का धर्म्म है कि वह सब से सरल उपाय का पहले उपयोग करके देख ले और यदि उस का कार्य्य उस से सिद्ध न हो।तब और दूसरा प्रयत्न करे।

धर्म्म जगत में वही है जिस्से हमें सुख प्राप्ति हो तथा अपमान न हो सुख वही है जिस्से हमें यहां भी सुख और स्वर्ग में भी सुख मिले। जिस कार्य्य का यदि प्रथम,चरण खराब है तो उस का अन्तस्चरण कदाचित ही अच्छा हो। अन्तिम चरण उस के प्रथम चरणही पर अवलम्बित है, इस लिये पहले बड़ी सावधानी से विचार धर लो। धर्म्म एक ऐसी वस्तु है जिस्से किञ्चित् कष्ट नहीं होता क्योंकि धर्म्म स्वयम् दुःख से परे है बिना धर्म्म के कुछ भी नहीं हो सक्ता, धर्म्म ही का जगत्

सार है और सुख तथा दुःख धर्म्म ही पर अवलम्बित है। दुःख विधर्म्मियों के लिये ही बना है, धार्म्मिक का दुःख कुछ भी नहीं कर सक्ता जिस प्रकार झूठ बोलनेवाला स्वयम् अपने आप न्याया-नुसार दण्ड का भागी है क्योंकि झंठ बोलनेवाला स्वयम् धर्म्मा-नुसार पाप है।

सदा सत्य बोलना धर्म्म है और असत्य बोलना अधर्म्म है परन्तु सत्यासत्य का निर्णय कठिन है इस लिये झूठ तथा सत्य बोलने के पूर्व बड़ी सावधानी से विचार कर लेना चाहिये नहीं तो केवल पश्चात्ताप के और कुछ शेष न रहेगा। एक उदाहरण इस सिद्धान्त के लिये उपयुक्त होगा। एक बार एक मनुष्य अत्यन्त क्रोधित हो दूसरे आदमी के पीछे भागा जा रहा था यह समझ कर कि वह मेरा शत्रु है और वास्तव में वह शत्रु नहीं है। यह आदमी भाग कर एक अपने मित्र के घर छिप गया। अब पहला आदमी घरवाले से उस आदमी का पता पूछता है तो उत्तर पाता है कि वहां नहीं है। इस अवस्था में जिस आदमी के यहां छिपा है वह असत्य नहीं बोलता है सत्य कहता है कि उस का शत्रु उस के घर में नहीं है। इस उपरोक्त बात के देखने से पता चलता है कि धर्म्माधर्म्म का जान लेना केवल शब्दों पर अवलम्बित नहीं है, भाव के अनुसार सत्यासत्य मानना चाहिये। जो बात न्याय पूर्वक है वह सत्य है अन्यथा असत्य। ऐसे अवसर पर शास्त्र कहता है कि मनुष्य को बड़ी सावधानी से विचार कर लेना चाहिये। परन्तु विचार भी कभी २ ऐसे अवसर पर काम नहीं देता। कठिन अवसर पर विचार भी चक्कर खा जाता है, अवसर के समय ऐसा प्रतीत होने लगता है कि यह करें या वह। ऐसे समय कभी २ धार्म्मिक काम भी विधार्म्मिक प्रतीत होने लगते हैं और विधा-

र्म्मिक धार्म्मिक। ऐसे अवसर पर बड़े साहस के साथ बहुत विचार कर कार्य्य में परिणित होना चाहिये, गुरुजनों की अनुमति भी ऐसे समय पर काम दे सकती है। गुरुजन उन्हीं को कहते हैं जिन्हें धर्म्मनीति आदि का पूर्णरूप से ज्ञान हो।

कभी २ ऐसा अवसर आता है कि सत्य बोलना ही पड़ता है और ऐसे सत्य बोलने से प्रत्यक्ष रूप में अधर्म्म प्रमाणित होता है ऐसे समय पर जहां तक हो सके वहां तक न बोले और यदि बोले सिवाय रहा ही न जाय तो गूंगा बन जाय और कुछ न कुछ इशारा करने लगे। परन्तु यदि बोलना ही पड़े तो उस बात को टालने का प्रयत्न करे। परन्तु यदि ऐसा करने से भी जान न बचे तो ऐसे अवसर पर जो न्याय चाहता हो वैसा कहे वही सत्य है;

बिना विचारे कभी कोई कार्य्य न करो जो बिना विचारे कार्य्य करते हैं उन्हें दुःख होता है इस लिये विचार करके कार्य्य करे। यदि विचार करने में कुछ समय लग जाय तो हानि नहीं ऐसा करने से दुःख नहीं उठाना पड़ेगा, आतुरता ही सदा हानिकारक है आतुरता कभी २ विधर्मी बना देती है। आतुरता ऐसे समय भली प्रतीत होती है कि जब उस कार्य्य का परिणाम पहले से भली प्रकार विचार कर लिया जाय; विचार करने के अनन्तर आतुरता बहुत योग्य होता है।

इस प्रकार धर्म्म एक वस्तु है जिस से दुःख कभी नहीं हो सकता वह सदा सुख का श्रोत है। धार्मिक वही पुरुष कहाता है जो अपने लाभ की इच्छा न कर औरों को लाभ पहुंचाता है। अपने जीवन के लिये जिसने लोक सेवा सब से श्रेष्ठ मानी हो। हम ईश्वरीय अवतार भी उसी पुरुष को मानते हैं जो धर्म्मानुसार दूसरों के उपकार में अपनी सारी शक्तियां खर्च करता हो। केवल

अपने लिये मरना कोई विशेष बात नहीं है। अपने लिये तो वे अबोध प्राणी भी मरते हैं जिन्हें वास्तव में कुछ भी मान नहीं है। जिस प्रकार यदि आप किसी एक जानवर का पीछा करें तो वह अवश्य अपनी रक्षा के लिये अपने प्राणों की रक्षा करने में अपने प्रत्येक उपाय छोड़ न रक्खेगा। परन्तु जितने धार्मिक पुरुष हैं वे औरों को सहायता देना अपना धर्म्म समझते हैं, संसार में यदि पुरुषत्व है तो औरों को सहायता दे धर्म्म सम्पादन करने की चेष्टा करो। यदि आपके पास धन है तो धर्म्म कमाइये। धन इसी लिये संसार में है कि उसको उपार्जन कर धर्म्म के काम में लगाया जाय। इस लिये प्रत्येक पुरुष का धर्म्म है कि वह निरन्तर कार्य्य करता हुआ अपनी उन्नति करके धार्मिक बनने की चेष्टा करे। सहायता को अपने अन्तःकरण में निवास दे।

आत्म श्लाघा और साहस ।

साहस करो, डरो मत भय से, जग में निर्भय हो जावो ।
आत्मश्लाघा, धारण कर मत वृथा गरीबी दिखलावो ॥
यह दुख जो है आज हो रहा, कल अवश्य सुख पावोगे ।
साहस कर शुभ कर्म्म करो जो चाहो सो पा जावोगे ॥

संसार में कभी २ ऐसी आपत्ति आ जाती है कि उस समय कुछ भी नहीं दिखाई देता ऐसे समय पर आत्मश्लाघा काम देती है। कभी २ मनुष्य अपने आप को कुछ नहीं समझता वह अपने आप को मृतवत् समझने लगता है अपनी पूर्व शक्तियों को तृणवत् भी नहीं समझता वह अपने मन में इतना अधीर हो जाता है कि उस को कहीं भी कुछ दिखाई नहीं देता। ऐसे अवसर पर मनुष्य को आत्मश्लाघा और साहस काम देता है।

मनुष्य को कभी अपने आप को मृतवत् नहीं समझना चाहिये। यदि अपने आप को मृतवत् समझोगे तो वास्तव में मृतवत् बन जाओगे तथा आप की सारी शक्तियां क्षीण हो जांयगी। जब तक आप के हृदय में आत्मश्लाघा की जागती हुई दिव्य ज्योति होगी तभी तक आप सांसारिक काम कर सकते हो अन्यथा आप अपना पैर भी आगे नहीं बढ़ा सकते।

आत्मश्लाघा का मनुष्य को हर समय काम पड़ता है और

साहस का किसी समय पर। जिस समय भारी शक्तियां एवम आत्मश्लाघा भी मनुष्य का परित्याग कर देती है तब केवल साहस अपना शौर्य्य दिखा कर कार्य्य में परिणित करता है। समर समय एक यही गुण है जो अपनी अनोखी छटा दिखाता है। परन्तु अत्याधिक आत्मश्लाघा की मात्रा मनुष्य को हानि पहुंचाती है वह तभी तक योग्य प्रतीत होती है कि जब तक मनुष्य उसके परिधि के भीतर रहे। उसकी परिधि के बाहर हो अपने आप को वास्तव में एक बड़ा भारी धनी मत समझ लो जब कि एक पैसा भी पास नहीं है और न मन को सन्तोष है। उसको आत्मश्लाघा नहीं कह सकते। यह एक वृथा एवम् मिथ्या आडम्बर कहा जायगा। आत्मश्लाघा जभी काम देती है कि जब तक वह वास्तव में अपनी परिधि के भीतर रहती है। जैसे कि आप के पास एक आदमी के पछाड़ने का शक्ति है और आप उसको उसी प्रकार कहते है तो यह वास्तव में वास्तविक आत्मश्लाघा कही जा सकती है परन्तु आप के शरीर में केवल एक मनुष्य का शक्ति है परन्तु आप उस को मिथ्याभाषी बन सौ मनुष्य के बराबर प्रकट करते हैं तो यह वास्तव में मिथ्या आत्मश्लाघा कही जायगी और आप अप्रमाणित हो जायंगे ॥

ऐसी मिथ्या आत्मश्लाघा काम नहीं देती यह कर्म्मवीर मनुष्य के लिये सर्वथा मना है। आत्मश्लाघा अपने पैरों के बल पर खड़ा रहने के हेतु उपदेश करती है, वह यह बताती है कि अपने आप को कुछ भी न समझ गलियों में ठोकरें खाते फिरना बुरी बात है। अपने पैरों खड़े रहो, देखो दुनियां आप के पैरों पड़ेगी, आप अपनी आज्ञा द्वारा सब कुछ करा सकोगे। परन्तु यदि मृतवत् हो जावोगे तो आप को जीवित ही मरना पड़ेगा, आप को आत्मश्लाघा

बिना औरों की बातें सुनना पड़ेंगी और आप कुछ भी न कर सकेंगे। आप को उस समय वे नीच कायर भी धिक्कारने लगेंगे जो वास्तव में कायर हैं; इस लिये अपने रूप को समझो, यह गिड़गिड़ाने की आदत छोड़ दो। आप जानते हैं कि जितना आप गिड़गिड़ायेंगे उतनी ही आप को दुनियां और अधिक त्रास देगी। यहां तक कि यदि आप अपने आप को मृतवत् समझ लेंगे, तो समाज आप का अन्तिम संस्कार करने के लिये भी न चूकेगी, परन्तु यदि अपने वास्तविक रूप को समझ कर कार्य्य में परिणित हो जावेंगे तो एक बार आप को वास्तव मृत अवस्था में भी देख समाज सन्मान करेगी। उस को आप का भय बना रहेगा। आप का नाम सुन कर औरों के हृदय कांप जायंगे। परन्तु यदि स्वयम् मृतवत रहोगे तो यथार्थ में कुचले जावेंगे। लोग आप से बिलकुल भय न करेंगे। उन को आप के प्रति किञ्चित् भी प्रेम न होगा। आप उन के सामने कुछ भी न माने जायंगे और आप को आप से छोटे २ भी दबा लेंगे। इस लिये मनुष्य का धर्म्म है कि वह अपने वास्तविक रूप को कभी नीचा न समझे। यह शक्ति ईश्वर दत्त है इसकी सदा इज्जत करना मनुष्य का धर्म्म है। इस का जहां तक हो सके वास्तविक मान करना चाहिये। जो ऐसा नहीं करते वे वास्तव में ईश्वर का अपमान करते हैं, इस लिये जहां तक हो सके अपनी शक्तियों को क्षीण न होने दो, और उसका सदा उपयोग कर प्रज्वलित बनाने की चेष्टा करते रहो। आत्मश्लाघा से काम लो देखो तुम कभी अपयशी न होने पावोगे। यह बड़ा भारी गुण है। परन्तु इस की वास्तविक मात्रा मात्र काम देती है। जिस प्रकार प्रत्येक वस्तु की वास्तविकता काम देती है उसी प्रकार इस की भी मात्रा काम आती है। परन्तु यह बात अवश्य है कि प्रत्येक पुरुष को जहां तक हो सके वहां तक आत्मश्लाघी होना चाहिये।

यदि वास्तव में आत्मश्लाघा से काम न चल सके तो फिर भी मनुष्य का यह धर्म्म नहीं है कि वह अपने कार्य्य को छोड़ बैठे, वह उस समय भी न रो दे; ऐसे समय पर साहस से काम लेना चाहिये। अपनी कोशिश आगे कदम बढ़ाने की करते चलो देखो कभी धोखा न खावोगे और इस पर भी यदि आप पराजित हो गये तो भी कोई चिन्ता की बात नहीं है। दो लड़ते हैं उनमें एक गिरता ही है, गिरने की चिन्ता करना वृथा है अपना केवल धर्म्म यही है, अपने साहस से कार्य्य में जुटे रहो फिर उठ कर कार्य्य करो जय पावोगे।

कार्य्य करना अपने हाथ बात है और सफलता प्राप्त होना दूसरी बात है। सफलता कोई ऐसी साधारण वस्तु नहीं है कि जिस को आप कार्य्य करने के पहिले ही पा सकें। कार्य्य करते चलो साहस लगाते चलो यदि सफलता मिलनी है तो आप मिल जायगी; परन्तु वीरों का यह धर्म्म नहीं है कि वे काम करने के पहिले ही रो दें, जय तभी मिलेगी जब जुट कर हिम्मत से काम किया जायगा जय भीख मांगने से नहीं मिल सकती। कभी कोई ऐसा नहीं चाहता कि वह अपनी स्वतन्त्रता, आप को दे दे तथा अपनी जय प्राप्ति की वस्तु आप के सुपुर्द कर दे; परन्तु यह आप का धर्म्म है कि यदि वह आप की है तो आप उस को ले लें।

कभी ज़मीन की ओर कायरों की तरह न देखो मर्दों की तरह उत्साह से सीना ताने आगे बढ़ते चलो। ईश्वर उसी के पक्ष में रहता है जो हिम्मत से धर्म्म पूर्ण काम करता है। समाज उसी की सराहना करती है जो साहस से अपना कार्य्य करता है। साहस के लिये पैसे की जरूरत नहीं और न हथियार की आवश्यकता है, क्योंकि ये चीजें पहिले ही अपनी अन्तिम दोहाई बोल

देती हैं। जब किसी वस्तु का अवलम्बन शेष न रह जाय तब साहस से काम करे, परमात्मा आप ही से सहायता कर जयी बना देगा।

वीर शिवा जी कोई ऐसा समृद्धिशाली नहीं था और न उस के पास कोई ऐसी सैना ही थी। वह केवल इने गिने सैनिकों के साथ औरङ्गजेब पर अपना शौर्य्य साहस के साथ दिखाता था। उसने यहां तक उसे तंग कर डाला था, कि वह मरते २ उससे अपने मन में सदा हार माना करता था। उसमें साहस की ऐसी चढ़ी बढ़ी मात्रा थी कि वह किसी की चिन्ता भी नहीं करता था उसके सामने औरङ्गजेब की वह सेना चक्कर खा चुकी थी, सके साहस के सामने अच्छे २ उसकी शरण आते थे।

साहस को किसी भी साधन की आवश्यकता नहीं है साहस सब के अन्त में काम देता है जब सब का अन्त हो जाता है तथा जब सब का तन्त निकल आता है उसी समय वह अपनी अनोखी रण भेरी बजा कार्य्य में परिणित हो जाता है। वह किसी को कुछ भी नहीं समझता उस समय उस के सामने पहाड़ भी चीटी के समान प्रतीत होने लगता है तथा तलवार के घाव भी एक प्रकार से कुछ भी प्रतीत नहीं होते। वह समय उसका अन्तिम शौर्यताई का होता है और उस समय वह केवल कार्य्य करने के सामने कुछ नहीं समझता, वह उस समय शहीद होने को तैयार हो जाता है कि जिसको हिन्दी में " वीर गति प्राप्त" कहते हैं।

जय उसी के हाथ में है जो साहसी है, रण में केवल एक साहसी हजार कायरों के लिए काफ़ी है। एक साहसी हज़ारों की नाक में दम कर देगा, उसका शौर्य्य हजारों से नहीं संभाला जा सकता, उसका हजार कुछ भी नहीं कर सकते। परन्तु यदि साहस नहीं है तो वास्तव में मनुष्य "मनुष्य" नहीं है, वह मृतक है।

वीर शिवा जी केवल इने गिने साहसियो पर अपना काम करता था परन्तु औरङ्गजेब अपनी वृहत कायर सेना से कुछ भी नहीं कर सकता था उसके लिये कुछ भी नहीं हो सकता था, वह। केवल पश्चात्ताप कर रह जाता था, इस लिये वीरो ! साहस से काम करो आप के सामने शेर भी कूर है यदि साहस छोड़ दोगे तो कूर भी शूर हो जायगा और आप को वृथा कायर बन अपनी गर्दन नीची करना पड़ेगी।

कर्म्मवीरों का यह धर्म्म नहीं है जो वे आत्मश्लाघा का परित्याग करें तथा साहस को कुछ भी न समझें। यदि वे इन दोनों को कुछ भी नहीं समझते तो वे अवश्य अपने आप को नहीं जानते इसलिये प्रत्येक कर्म्मवीर का धर्म्म है कि वह जहां तक हो सके अन्तिम अपना कार्य्य साहस से सिद्ध करने की चेष्टा करे। यदि ऐसा करते समय वह मर भी जाये तो कोई चिन्ता की बात नहीं है अन्त में प्रत्येक पुरुष को संसार में मरना ही है। फिर अपना शौर्य्य दिखा क्यों न अपना परित्याग करे, बीर बनकर साहस के साथ क्यों न अपनी जान दे डाले।

कीर्ति ही संसार में सब कुछ है कीर्ति ही यश की देनेवाली है; परन्तु यदि संसार में अपकीर्ति हो गई तो कुछ न हुआ और अपने जीवन को किसी अंश में भी सफलीभूत न बनाया; इस लिये वीरो ! कार्य्य में अन्त समय भी अपनी हार न मानो और अपकीर्ति ले वापिस न आओ। जगत में केवल एक ही बार जन्म पाता है किसे मालूम फिर मनुष्य देह और यह कार्य्यक्षेत्र मिले न मिले; इस लिये डटे रहो और वीर बनकर कार्य्य करो जहां तक होगा सफलता पावोगे। अपने आवेश में आरोश से कार्य्य कर डालो। जयश्री उसी के हाथ में रहेगी जो अन्त तक बीर बन कर

इस कर्म्मक्षेत्र संसार में अपना अलौकिक शौर्य्य दिखा कार्य्यरत होगा। अन्तिम बात याद रक्खो कि जो अपने पैरों खड़े रह कर शौर्य्यता के साथ साहस समेत कार्य्यरत रहता है उसी की जय होती है तथा वही वीर कहाता है। अपने अपूर्व रूप को न भूल जावो आप के भीतर दिव्य शक्तियां हैं ज़रा खोलकर देखिये और साहस से कार्य्य कीजिये।

शक्ति और सफलता ।

आगी जिस प्रकार आच्छादित रक्षा से हो जाती है ।
होकर भी अति प्रबल, राख में राख समान दिखाती है ॥
उसी तरह यह शक्ति हमारी कायरता में सनी हुई ।
शक्तिवहीन यह काया अपनी उससे ऐसी बनी हुई ॥
हृदय खोल कर देखो तो सब कुछ अपने में पावोगे ।
थोड़े से प्रयास से ही तुम रंक से राव कहावोगे ॥
जहां शक्ति का शब्द हुआ कि वहीं सफलता छाई है ।
उसे सौख्य ही सौख्य मिला है जिसे सफलता पाई है ॥

किसी बात में सफलता पाना कार्य्य करने पर निर्भर है बिना बोये जिस प्रकार धान्य नहीं मिल सकता उसी प्रकार विना कर्म्म किये सफलता पाना असम्भव है, सफलता उसी पुरुष के दर्वाज़े नाचती खड़ी है जो कार्य्यरत है विना कार्य्य किये कभी कोई वस्तु नहीं पा सकता। स्वर्ग उसी के लिये है जो उसके पाने की चेष्टा करता है। दुनिया के सुख एवम् विलासता भी उन्हीं के लिये है जो उन के प्राप्त करने का यत्न करता है विना चेष्टा किये दुनिया में कहीं पर भी कुछ नहीं है।

जिस प्रकार विना अपनी आंख से देखे उजाला नहीं दिखाई देता, तथा जिस प्रकार बिना अग्नि हुये उष्णता प्रतीत नहीं होती उसी प्रकार विना कर्तव्य किये सफलता नहीं होती है । कर्तव्य

उसी कार्य्य का नाम है जिसका करना अपने लिये श्रेयस्कर है जिस को करना अपना धर्म्म है अपने कार्य्य को करते चलो सफलता आप से आप आप के पैरों पड़ने लगेगी। कर्त्तव्य करने के पूर्व सफलता के स्वप्न देखना मूर्खता है और उसी का नाम मनोराज्य हैं।

मन को वृथा तरङ्गे न उड़ाने दो पहिले ही से विना कार्य्य किये अपनी कार्य्य सिद्धि की लालसा मत करो, विना कार्य्य किये पहिले ही से उसके फल की चिन्ता करना महान मूर्खता एवम कायरता है। इस लिये अपने कर्तव्यानुसार कार्य्य करते चलो और आगे बढ़ते चलो। यदि रुक जावोगे तो यह अवसर हाथ से चला जायगा जिसको आप अपने मुख के सन्मुख प्रस्तुत देखते हैं। जो दिन आज है वह कल नहीं रहेगा जो क्षण अभी है वही एक क्षण के अनन्तर न मालूम कहां चला जायगा यहां तक कि पल के बाद पल तथा विपल के बाद त्रिपल भी नहीं रहते। इस संसार में जीवनी बहुत थोड़ी है और कार्य्य अत्याधिक करना है, अपना समय केवल वर्ष, मास, पक्ष, दिवस, घड़ी पल और विपल आदि छोटे २ भागों में विभक्तित है जिन को व्यतीत होना हम अपनी दृष्टि से भी नहीं देख पाते और जिसका हम हिसाब भी नहीं रख पाते, समय कैसी जवाबदारी का काम है। परन्तु आप उस की ओर ध्यान भी नहीं देते और इसी लिये संसार में अपनी पूछ नहीं होती यदि आप इन्हीं को उपयोग में लाने की चेष्टा करें तो फिर कहना ही क्या है।

इस समय की कदर करना या न करना अपने ही हाथ में है अपना चाहे तो आज कर्म्म द्वारा समय का उपयोग कर समुद्र को पार करके जमीन बना सक्ता है और जमीन को समुद्र। असम्भव

जगत में कोई वस्तु नहीं है । यहां असम्भव शब्द केवल मूर्खों के मुंह में बास करता है परन्तु कार्य्यकर्ता के पास नहीं फटक पाता । अपना चाहे तो अपने बने हुये किले को भी मिटा सकता है, परन्तु यदि चाहो तो आग में बाग लगा सकते हो । ये सारी शक्तियां हृदय के भीतर छिपी हुई हैं ज़रा खोल कर देखिये और उसका उपयोग कीजिये ।

आभ्यन्तरिक शक्ति अथवा हृदय की शक्ति पर एक प्रकार का आवरण मात्र छा जाता है बस इसी कारण जन समुदाय उसका उपभोग नहीं ले सकता । यह शक्ति अग्नि समान भीतर छिपी हुई है और जिस प्रकार अग्नि पर राख अपना आवरण कर आच्छादित कर देती है उसी प्रकार इस आभ्यन्तरिक शक्ति को भी जानिये । जिस प्रकार अग्नि की रक्षा अलग करते ही वह भभक उठती है । उसी प्रकार अपनी शक्ति को भी उत्तेजन करने से वह भी चमक उठती है तथा विनयन द्वारा भी उसकी प्रज्वलित प्रगट हो सकती है । इस शक्ति के चमकते ही अपने को सारे कर्त्तव्य सूझने लगते हैं और अपना कार्य्यरत हो सफलता सहज ही कर्म्म द्वारा पा जाते हैं ।

मनुष्य शारीरिक शक्ति से कुछ नहीं कर सकता कि जब तक आभ्यन्तरिक शक्ति जोर न दे । बल होते हुये भी जब तक मनोबल अपना प्रबल बल नहीं दिखाता तब शारीरिक बल कुछ भी नहीं कर सकता । मनोबल शारीरिक बल को चलानेवाला है, यह उसके आधीन है । कोई भी पहलवान कभी किसी को नहीं पछाड़ सकता कि जब तक उसका मनोबल उससे न कहे । ऊपरी भड़क संसार में कोई वस्तु नहीं है वह केवल गदहे को शेर की खाल पहिरा कर उसे शेर बना देने के समान है, परन्तु आभ्यन्तरिक

शक्ति बिजुली के समान है वह जिस समय कड़कती है उस समय बिजुली के सदृश कार्य्य कर देती है और अच्छी शक्तियों का कलेजा चूर चूर कर देती है उसके सामने हजारों शारीरिक शक्तियां पानी भरती फिरती हैं उसी शक्ति की ओर देखिये आप के सामने सफलता दोनों हाथ जोड़े खड़ी है।

जहां आत्मशक्ति जाज्वलित मान हो जाती है वहां से बाह्य शक्तियां अपने आप आ जाती हैं, परन्तु जहां आत्मशक्ति नहीं है वहां बड़ी आपत्ति है। विनयन द्वारा उस आत्मशक्ति का विकाश कर कार्य्य में परिणित हो जावो सफलता पाना कोई दुस्तर नहीं है। सोना और आराम करना तो सदा के लिये है, मरने के अनन्तर सोने ही के लिये कबरों में स्थान है वहां अपने को कोई जगाने नहीं आयगा। परन्तु यह कार्य्य करने का समय अत्यन्त अल्प है इसका उपभोग करना ही अपना परम धर्म्म है। यदि इस मनुष्य देह का पाना सार्थक करना है तो अवश्य इस योनि के निमित्त ही कार्य्य कर सफलता पानी चाहिये, इसी योनि में अमरत्व है तथा इसी में लयत्व है। दोनों वस्तुयें आप के हाथ में हैं आप जिसका चाहें उपभोग कर लें और जिसको चाहें छोड़ दें। जिनका नाम आप इतिहासों में पाते हैं उनके विषय में यदि आप विचार करें तो आप को पता चलेगा कि उन का नाम ऐसी सरलता से प्रख्यात नहीं हुआ है उन्हें बड़ी २ कृतिएं करनी पड़ीं तब कहीं अपना नाम स्थिर कर पाये हैं; ऐसी स्थिति में आप भी कुछ इस सृष्टि के हेतु कर जाइये। और अपने नाम को अमर बना जाइये।

जय उसी पुरुष का होता है जो अपने कार्य्य से विलग रहना चाहता है, देखो बहते हुये घास के तिनके पर हासता

अपना प्रभाव नहीं दिखा सक्ती क्योंकि वह कर्म्म में रत है परन्तु यदि वह चलने से रुक जायगा तो उसी समय सड़ जायगा उसके लिये फिर कोई सहायता न देगा। परन्तु जब तक वह बहता रहता है तब तक वही जल उसका सहायक बना रहता है जो उसको उसके रुक जाने पर सड़ा देता है; इसी प्रकार मनुष्य को वे शक्तियां जब तक सहायता देती रहती हैं कि जब तक मनुष्य उनका उपभोग लेता जाता है परन्तु अन्त में वे ही शक्तियां उसी पुरुष को खा लेती हैं कि जिस की सहायता वे पहले करती रहती हैं।

शक्ति स्वयम् कभी किसी का साथ नहीं देती, शास्त्र कभी किसी का नहीं है वह केवल उसी पुरुष का है जो उस का उपभोग कर लेता है। जिस प्रकार अपनी स्वतः की तलवार अपने काम भी जभी तक आती है कि जब तक उस पर अपना अधिकार किये रहते हैं और उस का उपयोग करते रहते हैं परन्तु वह शत्रु के हाथ में पड़ते ही अपनी गर्दन पर घूमने के लिये इन्कार नहीं करती। उस के पास स्नेह नहीं है। स्नेह केवल आप के पास है और आप स्नेही बन अपने आप को कृतान्त कर देते हैं, इसलिये अपनी सफलता के लिये कभी किसी का मोह न करो अपना कार्य, कार्य्य द्वारा सिद्धि करने के लिये चेष्टा करते रहो।

अब प्रश्न यह उठता है कि पुरुष को कब तक सफलता के प्रति दौड़ लगानी चाहिये, कब तक कार्य्यरत रहना चाहिये। इस विषय पर विचार करते ही यह एक दम प्रगट हो जाता है कि मनुष्य को अपनी शक्त्यानुसार ही सफलता का पीछा करना चाहिये यदि इस शक्ति की भी चिन्ता छोड़ देंगे तो अपने को बीच ही मे अटकना पड़ेगा और पूर्ण सफलता तक भी न पहुंच

पायँगे इस लिये यदि कार्य कर सफलता प्राप्त करनी है तो अवसर एवं शक्ति पर भी विशेष ध्यान दीजिये। शक्तियां विनयन द्वारा बढ़ सक्ती हैं और मनुष्य आपराधिक शक्तिशाली बन सक्ता है।

अवसर भी एक अनोखी वस्तु है, आज आप जिस कार्य्य के लिये असमर्थ हैं परन्तु वह कल थोड़े ही समय में सफली भूत हो जायगा। जिस को आज आप पहाड़ समझ रहे हैं वह कल एक राई से भी छोटा बन जायगा। क्या पता है कि आज जो कार्य्य सरल तथा सुगम है वह कल बहुत कठिन बन जाये; इस लिये प्रत्येक पुरुष का धर्म्म हैं कि वह अपने अवसर को कभी बृथा न जाने दे अवसर का चूका फिर कभी उबरने नहीं पाता।

सफलता के लिये पहिले से ही किसी बात को देख भय से न डर जावो, वाह्य दृश्य से आभ्यन्तरिक दृश्य नहीं जाना जाता किसे मालूम उस के भीतर कुछ न हो। वह केवल धोखा हो, जिस को आप शक्तिवान् समझते हैं, जिस को आपने सब कुछ समझ रक्खा है वह केवल एक भ्रमात्मक ही हो। जिस को आप पक्का महल समझते हैं वह केवल एक धुयें का गृह हो इस लिये उस को देखते ही भय न खावो उस को देखो और अजमा लो।

भीड़ देखकर मत घबड़ावो, भीड़ करनेवाले वही होते हैं जो आगे नहीं बढ़ सक्ते। जिन में आगे बढ़ने का साहस नहीं है, जो कायर हैं उन में कर्म्मवीर वही कहाता है तथा सफलता उसी के हाथ आती है जो उन भीड़वालों को ठेल कर आगे बढ़ता है कर्म्मवीर पुरुष ऐसी गीदड़ भबकी से नहीं डरते।

किसी की बात पर एक दम विश्वास न कर लो, किसी का अनुभव आप के काम का नहीं हो सक्ता। किसे मालूम उस का

अनुभव झूठा हो, किसे मालूम उस की ऐसी शक्ति न हो जैसी आप की है कौन कह सक्ता है कि वह आप से अधिक ज्ञान रख सकता है; इस लिये अपनी परीक्षा दूसरों की परीक्षा पर अवलम्बित न रक्खो ऐसा करने से कभी २ ऐसा होता है कि आप को दूसरों के भरोसे अपनी सफलता भी खो देनी होती है। किसे मालूम आप उस को ठीक कर सफलती भूत हो जायँ।

यदि एक बार आप किसी कार्य्य में सफलता न पायें तो आप को हताश हो कर उसे छोड़ बैठना आप का धर्म्म नहीं है। असफलता के अनन्तर सफलता अपने आप आही जाती है केवल प्रयत्न करना अपना धर्म्म है। जिस कार्य्य में आज आप असफली भूत हैं उसी कार्य्य में प्रयत्न द्वारा आप को कल सफली भूत होना होगा परन्तु उसी को छोड़ देना पाप है। मैंने कहीं पढ़ा है कि एक बार एक बीर जो पहिले लड़ाई में प्रयत्न कर बार २ हार चुका था और उसी सफलता के विषय में व्यग्र हो अपने कमरे में बैठा कमरे के छत की ओर देख रहा था कि उस की निगाह एक दम एक मकड़ी पर पड़ी। यह पड़ा २ उस का तमाशा देखने लगा। देखते २ उस मकड़ी ने बार बार जाला बनाया परन्तु वह असफली भूत हुई, उसने अपना प्रयत्न न छोड़ा। करते २ वह तेरहवीं बार सफलता पा गई यह देख उस बीर से भी न रहा गया उसने अपनी कायरता त्याग अपने फौजी बीरों को फिर एक बार मालूम के साथ युद्ध करने का परामर्श किया। इस का परिणाम यह हुआ कि वह बीर अन्तिम बार सफलता पा गया।

इसलिये प्रत्येक कर्म्मवीर पुरुष का धर्म्म है कि वह सफलता प्राप्त करने के लिये जहां तक हो सके तन मन से जुटा रहे।

सफलता अवश्य कार्य्य करने से मिल ही जाती है, सोते हुये सिंह के मुंह में हिरन अपने आप नहीं पहुंचता उसको उसके प्राप्त करने के लिये अवश्य प्रयत्न करना होता है प्राप्त करना ही सफलता है। वीरों का धर्म्म है कि वे धर्म्म द्वारा प्रत्येक कार्य्य की सफलता प्राप्त कर लें जो ऐसा नहीं करते वे पतित हैं उन का अस्तित्व नहीं रह सक्ता और न वे कभी कुछ माने जा सक्ते हैं। कार्य्य द्वारा कर्त्तव्य परायण मनुष्य के हाथ में सफलता की डोर है चाहे वह उस का जैसा उपभोग कर ले। यह शक्ति प्रत्येक पुरुष को इसी लिये दी जाती है कि वह अपना सफलता के लिये उस का व्यय करे परन्तु वह यदि ऐसा नहीं करता तो यह उसकी विशेष बुद्धिमत्ता है।

स्वास्थ्य ।

विना स्वास्थ्य के कभी न कोई जन जग में जय पाता है ।
हाथ उठाना कठिन उसे है, बोला भी नहिं जाता है ॥
कार्य्य विमुख जो रहता है वह रुग्न सदा होता जाता ।
भाता वह न किसी को जग में उसे न कोई है भाता ॥

अब हमको यह देखना है कि स्वास्थ्य शास्त्र द्वारा कर्म्म का कितना प्रखर संबन्ध प्रमाणित होता है । सब के प्रथम अपने एक दिन के बालक पर जिस समय दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं कि वह बालक उत्पन्न होते ही ऊपरी हवा लेना चाहता है ऐसी शक्ति बढ़ाने के लिये उस को रोने की क्रिया करनी होती है जिसके कारण वह ऊपरी श्वास लेने के योग्य हो जाता है । अब आप जब बालक को उसकी माता के उदर में सूक्ष्म दृष्टि द्वारा विचार शक्ति से विचार करते हैं तो पाते हैं कि बालक वहां भी अत्यन्त सूक्ष्म कार्य्य में परिणित रहा हो करता है । वहां उसको बारीक से बारीक श्वास लेते २ यह ऊपरी मोटी श्वासें लेने की टेव डालनी होती है । इसके अनन्तर ज्यों २ बालक बड़ा होता जाता है त्यों २ वह अपनी शारीरिक शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न करता जाता है । वह पहले २ श्वास लेना सीखता है इसके अनन्तर दूध ग्रहण करना, था खाद्य पदार्थ का सेवन आदि ऐसे कार्य्य बालकों को पैदा होते ही करना होते हैं, यदि मनुष्य इन कार्यों से बचने की चेष्टा करे तो कदाचित् उस का जीना भी सदा के लिये असम्भव हो जाय ।

मनुष्य जितना प्रयत्न कर अपनी देह को बलवती बनायेगा उतना ही वह बलवान बनता जायगा, जितना वह अपनी देह का प्रयोग करेगा उतना ही पुष्ट होता जायगा । पुष्टता

कार्य्य पर निभर है केवल बैठे रहने से कोई भी मनुष्य पहलवान नहीं हो सक्ता। पहलवानी करने के लिये तथा शक्तिशाली बनने के लिये निरन्तर व्यायाम की आवश्यकता है जो ऐसा नहीं करना चाहते वे सदा रोगी बने रहते हैं और उन से उन के मुंह की मक्खी भी नहीं उड़ती। मक्खियां उड़ाने के लिये भी हाथ हिलाने की आवश्यकता है। यदि ऐसा नहीं करना चाहते, यदि हाथ नहीं हिलाना चाहते तो आप के मुंह में मक्खियां निवास स्थान बना लेंगी आप चाहे कार्य्य करने की चेष्टा करें या न करें परन्तु और दूसरे ऐसा करने से नहीं रुक सक्ते।

रोगी वही रहता है जो कर्म्मोंच्युत रहता है रोग कोई वस्तु नहीं है केवल नैसर्गिक नियमों का उल्लंघन करना ही रोग माना जाता है। आरोग्यमार्गानुगामी बनना केवल स्वाभाविक नियमों का पालन करना है। शरीर यह आत्मा के रहने का पवित्र स्थान है इसलिये इस की चिन्ता बड़ी सावधानी से करनी चाहिये। जिस प्रकार आप और सांसारिक वस्तुओं के सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं उसी प्रकार अपने को इस शरीर के योग्य रखने की चेष्टा करनी चाहिये। यदि स्वास्थ्य कर्म द्वारा योग्य नहीं रख सक्ते और वाह्य वस्तुओं की चेष्टा करते फिरते हो तो यह निरी भूल है। जब तक आप का स्वास्थ्य योग्य न होगा तब तक सारी वस्तुयें किसी काम की मानी नहीं जा सक्ती हैं। संसार के सारे सुख केवल एक स्वास्थ्य के पीछे तृणवत् माने जाते हैं। अब हम को इन सब का पृथक २ संबन्ध कर्म्म द्वारा बताकर सिद्ध करना है कि मनुष्य किस प्रकार स्वास्थ्य रह सक्ता है दवाइयां मनुष्य को कभी स्वास्थ्य नहीं रख सक्तीं दवाइयां केवल रोग को दबा देती हैं परन्तु व्यायाम तथा नैसर्गिक पदार्थ उन की कमी की पूर्ति करता है, जिस वस्तु की न्यूनता होती है उन को ठीक स्थिति पर

ले आता है। जीवित रहने के लिये तीन मुख्य वस्तु हर प्राणी को चाहियें-वायु, जल तथा अन्न। हम को ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि हम को स्वच्छ एवम सब से उत्तम वायु सेवन को मिले वायु सेवन से हमारे शरीर के सारे वायु कोष पुष्ट होते हैं कि जिन के कारण हम दीर्घ जीवी बन सक्ते हैं। हमारा जीवन केवल स्वासाओं के बल पर अवलम्बित है।

मनुष्य को पैदा होने के साथ ही स्वांस की क्रिया सब से प्रथम करनी होती है और शरीर त्याग करने के अन्त समय तक अपना साथ नहीं छोड़ती यह सब के प्रथम आती तथा सब के अनन्तर जाती है इस का और जीव का सब से घनिष्ठ एवम् सब से निकटवर्ती संबन्ध है; इस लिये इस का बड़ी सावधानी से उपभोग कर आरोग्य रहने की चेष्टा करनी चाहिये। जितनी हवा मैदान की होगी उतनी ही योग्य तथा बलदायक होगी। इस लिये प्रत्येक जीवधारी मनुष्य का धर्म्म है कि वह शुद्ध वायु सेवन करने का प्रबन्ध करें, ऐसी क्रिया करे जिस्से शुद्ध वायु मिले जितनी वायु जो मनुष्य अपने वायु कोष में अधिक रख सक्ता है वह उतना ही शक्तिवान् माना जा सक्ता है।

अब दूसरा संबन्ध जल का है। यह भी शुद्ध ग्रहण करना चाहिये, जल के द्वारा ही मल विसर्जन आदि क्रियायें बड़ी योग्यता से होती हैं जितना बहता हुआ जल होगा उतना ही शुद्ध होगा। इस के द्वारा मनुष्य स्नानकर अपने अंग, प्रत्यंग को पवित्र एवम् शुद्ध रख सक्ता है कि जिस के कारण वायु रोंगटों द्वारा भली प्रकार निकल सक्ती है और शरीर की शुद्धि हो सक्ती है।

अब तीसरी वस्तु अन्न है। यह भी बड़े मार्के का पदार्थ मनुष्य के लिये है यह मनुष्य के शरीर में और पदार्थ मिश्रित कर रक्त संचार करता है कि जिस के द्वारा मनुष्य का जीवन रहता है।

अन्न जितना जल्दी पचनेवाला खाया जाय उतना ही लाभदायक होता है, मनुष्य के शरीर में कई एक ऐसे यन्त्र हैं जो अन्न का रस आदि बनाते हैं जिन से रक्त एवम् अस्थि वृद्धि होती है। मादक द्रव्यों का खाना मनुष्य के लिये श्रेष्ठ नहीं माना जा सक्ता क्योंकि वह पचने में अधिक समय लेता है पचने में अधिक समय के व्यय होने से अग्नि उतनी ही मन्द होती जाती है और अग्नि की मन्दता अस्वास्थ्यता कर देती है।

जब ये तीनों तथा अग्नि एवम् प्रकाश जहां मनुष्य को ठीक मिला कि मनुष्य बलवान् हो कर दीर्घजीवी होता जाता है इन सब के योग से रक्त बनता है और रक्त का सञ्चार जब मनुष्य के शरीर में निरन्तर होता है तभी मनुष्य स्वास्थ्य रह सक्ता है। स्वास्थ्य सम्पादन करने के लिये व्यायाम मुख्य है इसलिये प्रत्यक प्राणी का धर्म्म है कि वह व्यायाम कर अपनी स्वास्थ्य रक्षा का प्रबन्ध करे। इन उपरोक्त पदार्थों की उपलब्धि तभी हो सक्ती है जब मनुष्य इन के प्राप्त करने का प्रयत्न करे अन्यथा जीवित रहना अत्यन्त कठिन है। यदि दीर्घजीवी रहा चाहते हो तो स्वास्थ्य शास्त्र का योगरीति से अध्ययन कर शरीर पुष्ट रखने का यत्न करो।

प्रत्येक काम केवल कर्मद्वारा ही सिद्ध हो सक्ते हैं इसलिये स्वास्थ्य रक्षा के लिये भी यत्न कीजिये। स्वास्थ्य रक्षा पर ही जीवन का व्यापार है हम को तभी तक सांसारिक वस्तुवें योग्य प्रतीत होती हैं जब तक हमारी आरोग्यता स्थिर है। आरोग्यता क्षीण होने पर कोई नहीं पूछता और न अपने को ही योग्य लगता है। स्वास्थ्य ठीक रखने के उपरान्त ही और विचार मनुष्य के हृदय में बढ़ते हैं मनुष्य के और कारणों तथा कर्म्मों पर फिर विचार किया जा सक्ता है जब पहले उस का स्वास्थ्य ठीक हो।

गरीबी ।

प्राण होते देह में क्यों दीन बाणी भाषते ।
शक्ति होते हाथ में क्यों भीख प्रियवर मांगते ॥
शक्ति तुम को औ धनी को ईश ने दी एक है ।
फिर मांगते हो किस लिये, क्या मांगना भी ठीक है ॥
कर्त्तव्य के सन्मुख गरीबी ठोकरें ही खायगी ।
कार्य्य करता देख तुम को वह न टिकने पायगा ॥

गरीब जग में कोई नहीं रह सक्ता, व्यावहारिक दृष्टि से देखते हुये कर्म्मकर्ता पुरुष के गरीबी आंगन में नाचती फिरती है परन्तु भीतर घर में जाने का साहस नहीं करती क्योंकि वह जानती है कि कहीं मुझ पर और काम करने की अधिक आपत्तियां न आ जायँ। वह कर्म्मपरायण पुरुष को देख थर २ कांपा करती है वह कर्म्मण्य पुरुष को देखते ही भयभीत हो नाचती फिरती है। गरीब दुनियां में वही है जो दक्षता से कार्य्य नहीं करता या बिल्कुल कार्य्य विरत रहता है और जो कार्य्य करना नहीं जानता तथा जो अकर्म्मण्य रहता है उसी को दूसरे के मुंह की ओर ताकना पड़ता है।

अब इस संसार में कई प्रकार के गरीब हैं एक तो वे जो वास्तव में गरीब हैं तथा दूसरे वे जो गरीब न होते हुये भी अपने को गरीब मानते हैं और तीसरे वे जिनका केवल अन्तःकरण

मात्र गरीबी से आवृत है और जो सदा पैसे के लिये रोया करते हैं।

हम उन परिश्रमी मज़दूरों को भी गरीब नहीं मानते जो दिन भर सतत परिश्रम कर संध्या के समय कुछ थोड़ा सा आहार कर रात्रि में सुख की नींद बेखटके सोते हैं। जो अपनी समाज तथा देश सेवा कर फटी कमली ही ओढ़ कर वर्षा का पानी एवम् पौष, अगहन का जाड़ा अपनी उघारी देह पर बिताते हैं। जिन के पास केवल उसी दिन का खाद्य पदार्थ उपलब्ध होता है कि जिस दिन वे कार्य्यरत होकर आते हैं जिनको दूसरों की अगाध सम्पति देख कर भी क्लेश नहीं होता। जो सूखी रोटियों के केवल टुकड़ों पर ही शान्त हो अपने दिन आनन्द से व्यतीत करते हैं जो आप अमीरों की ओर देखते तक नहीं, जिनके मन में आप अमीरों के प्रति विषाद करने का समय ही अवशेष नहीं है उनको उनके बच्चों के प्रति भी ऐसी बाह्य प्रीति नहीं होती कि जैसे अमीरों को अपने बच्चों के प्रति होती है। उनको हरामखोरी की ओर ध्यान देने का अवकाश ही नहीं रहता. आप की घी चुपड़ी रोटियों की ओर वे देखते भी नहीं हैं, उनको ऐसे हरामखोरी की ओर देखने की आदत ही नहीं है; वे केवल अपने न्याय युक्त कार्य्य की ओर ही ध्यान देते हैं और न कभी डाह करते हैं।

हम यह मानते हैं कि उनके निरन्तर परिश्रम का बदला समाज को उनकी योग्यता देखकर देनी चाहिये परन्तु समाज ऐसा नहीं करती यह केवल उसकी कायरता है और डरपोकपन है तथा अकर्म्मण्यता है क्योंकि यह उन सतत परिश्रमी मज़दूरों के लिये इतना उपार्जन करने की शक्ति नहीं रखती जो उन्हें यह उनकी योग्यतानुसार दे सके। हम भली प्रकार से जानते हैं कि

बड़ी आमदनीवाले छोटी आमदनीवालों का गला घोंट कर खा जाते हैं वे सदा उनको त्रास देने का यत्न करते रहते हैं। उनको पुरस्कार देने में सदा अपने हाथ संकुचित किये रहते हैं वे इनकी परवाह नहीं करते तथा उनको तुच्छ निगाह से देखते हैं। इसका यही कारण है कि वे विचारे गरीब आदमी तथा सतत परिश्रमी उनको अपने मस्तक पर बिठाये फिरते हैं, उनको वे देखकर सौ २ बार सलाम करते हैं और हजार बार झुकते फिरते हैं। उन अमीरों का अस्तित्व केवल इन गौवों पर निर्भर है यदि आज गरीब अपना मस्तक ऊंचा कर लें अथवा अपनी जगह पर स्थिति से बदल जायं तो अमीर लोग जो ऊंचे नज़र आते हैं एक दम नीचे गिर पड़ें। उनका अस्तित्व इन्हीं गरीबों पर है वे इन्हीं के भरोसे जीवित हैं परन्तु यह हमको याद रखना चाहिये कि वे गरीब कभी नहीं हैं उनके यहां गरीबी अपना मुंह तक नहीं बना सकती क्योंकि वे कर्म्मपरायण हैं।

परन्तु गरीब केवल अमीर समाज है जो उन्हीं के परिश्रम में से अपना लाभ सोच लेती है जो उनके मुंह की ओर चातक की भांति ताका करती है, जिसको स्वावलम्बन बनने का संयम नहीं है, जो स्वयम् कार्य्य करना नहीं जानती, जो इन्हीं गरीबों के बल पर कूदती फिरती है। ये जितने अमीर हैं जिनकी इमारतैं आज बड़ी ऊंची नजर आती हैं और जो माखन मिश्री के गोले भी गले के नीचे उतारते समय सौ २ बार दुःख से कराहते हैं उनमें से बहुत से हम ऐसे ही पायंगे कि जिन्हों ने ग़रीबों को ही मार कर यह सारी सुकुमारता, बिलासता तथा धन उपार्जन किया है। विचार कीजिये, आप अवश्य कतिपय प्रत्येक अमीर के नीचे इसी प्रकार का एक न एक प्रकार से अंधेरा अवलोकेंगे।

याद रखिये परिश्रमी के पास यदि खाने के लिये भी न हो तब भी वह गरीब नहीं है क्योंकि वह दुःख के कठिन मार्ग से सदा निवृत हो जाता है और सदा निवृत्त होने की चेष्टा किया करता है। परन्तु वही एक अमीर निःसन्देह गरीब है जो दूसरों को कम दाम दे अपना काम बना उनका दाम दबाना चाहता है तथा उन गरीबों के धन को एकत्रित कर अपना भण्डार गाड़ कर रखता है; अपने धन को दबाना चाहता है क्योंकि वह भली प्रकार जानता है कि वह उसकी कमाई नहीं है। वह दूसरों की कमाई है और उसके जाते ही उसे भूखा मरना पड़ेगा क्योंकि उसमें स्वयम् उपार्जन की शक्ति नहीं है। गरीबों के डर से डरकर वह उस धन को दबाये रहने की चेष्टा करता है अपना धन वही लालची दबाता है जिसमें कार्य्य करने की शक्तियां नहीं हैं, जो मुर्दा है।

पुरुष को केवल अपनी कठिन कमाई का ही धन अपने पास रखना चाहिये मुफ्ती आमदनी का धन बेकाम है उस का उस को अबेर कर रखना पाप कमाना है, क्योंकि उससे संसार की कार्य्य-वाहियों में अधिक असुबिधायें पड़ती हैं और संसार का व्यवहार बराबर नहीं चल सकता, वही पैसा यदि बाहर होता तो उसका संसार में और अधिक प्रयोग हो अधिक उन्नति संसार की होती। उसका अबेर कर रख छोड़ना संसार की उतनी ही अवनति करना है कि जितना उसका संसार के सन्मुख रखकर उसका प्रयोग कर लेना है।

तीनों प्रकार के गरीब, तथा धनी आदि पुरुषों का विवरण ऊपर देख यही कहना पड़ता है कि सब में से वही सुखी है जो केवल अपने ही बल पर खड़ा रह कर कार्य्यरत रहता है, वही संसार में सब से अधिक सुखी है जो अपना कार्य्य कर सन्तोषी रहता है और जिसके हृदय में डाह की

ज्वाला प्रज्वलित नहीं होती, जो अपना योग्य कर्तव्य कर अपने अलौकिक कर्मद्वारा जग के सामने अपना साथक अस्तित्व प्रमाणित करता है। इसके अतिरिक्त शेष दो श्रेणियां सदा अकर्म्मण्य में गिनी जा सकती हैं। उनका वास्तव में मान नहीं हो सकता वे सदा अपमानित माने जांयगे जो औरों के भरोसे अपने वृहत् कारखाने चलाते हैं तथा जो औरों के धन को लूट लेना चाहते हैं। वह पुरुष सदा निर्धन है जिसके हृदय में शान्ति नहीं, यदि उसे सारे संसार की सम्पत्ति भी मिल जाय तौ भी उसे शान्ति नहीं मिलेगी। अपने बल पर खड़े रहकर अपने साहस के साथ कार्य्य-द्वारा जितनी सम्पत्ति मिले वही तुम्हारी है उसी पर अधिकार किये रहो और यदि कुछ न मिले तो कोई परवाह नहीं। अपने कार्य्य में जुटे रहो सम्पत्ति नाचती फिरेगी और गरीबी दौड़ती फिरेगी।

गरीबी से भय न करो सदा कार्य्येरत बने रहो कभी गरीबी नजर भी न आयेगी। गरीबी से बचने का केवल कर्म ही बड़ा सहारा है इसे पकड़े रहो अच्छे २ अमीर भी आप के दरवाजे आकर अपनी टोपियां आप के पैरों में रक्खेंगे क्योंकि उन को सिवा आप के और किसी का सहारा ही नहीं है। यदि वे अपने आप को अमीर बनाना चाहेंगे तो उन्हें अवश्य ही आप की सेवा करनी होगी। कर्म ही संसार में सब कुछ है।

बहुधा देखा गया है कि कर्मण्य पुरुष अपने आप को इस एक अपव्ययता के कारण भी निर्धनी बना लेते हैं। वे दिन भर परि-श्रम कर सन्ध्या समय एक ऐसी वस्तु ले आते हैं कि जिस का उपभोग वे कभी अपने जीवन भर भी नहीं ला सक्ते, जो उन के कभी काम में न आती हो अथवा जिस को कभी २ उपभोग लिया जाता है, या जिस के बिना हुये भी काम चल सक्ता है।

इस प्रकार की तीनों बस्तुयें मोल लेना सदा हानिकारक हैं, ऐसा करना गरीबी मोल लेना है। अपने हाथ का लाल देकर दूसरे के हाथ की ओर देखने के समान ही ऐसा करना है। ऐसा करते अपने को लज्जा आनी चाहिये।

क्या आमदनी से अधिक व्यय करना भी भलमनसाहत है। आप वृथा व्यय कर देते हैं आप के उस पैसे को जिसे आप ने अपनी हड्डियां तोड़ कर पैदा किया है वृथा त्याग देते कैसे अच्छा लगता होगा जब मालधनी तुम पर तकाज़ा करता होगा तथा उस के सिपाही जब आप की जान खाने आते होंगे तब कैसे आप को भला प्रतीत होता होगा उस हरामखोर साहूकार की बातें आप को कैसी मालूम होती होंगी जो ज़रा सी बातें बना आप को बहका-कर अपने एक रुपिये के दो रुपिये बड़ी सरलता से बना लेता है। आप का और आप के साहूकार का जिस समय एक स्थान में मिलाप हो जायगा उसी समय आप की गर्दन एक दम नीची हो जायगी। हम देखते हैं कि हमारी गरीब समाज इसी में डूबी जाती है और अपनी गर्दन ऊंची नहीं कर पाती। दिन रात लज्जा के मारे सिर नीचा हो जाता है सदा नम्र बना रहना पड़ता है। मर्द वही है जो कार्य्य कर सीना ऊपर करके चले और जिस को किसी का अपव्यय के कारण देना न हो।

कर्म में संलग्न हो जाइये अपना योग्य व्यवहार कीजिये आप अवश्य धनी बन जायँगे। आप केवल स्वोपार्जित धन एकत्रित कीजिये न्याय संगत धन अपने पास रखिये। थोड़ेही दिनों में आप उन धनिकों से अधिक धनवाले हो जायँगे जो कुकर्म द्वारा सम्पादन करते हैं जिन का निर्वाह कुकर्म के ही धन द्वारा होता है वे व्यवहारिक ज्ञान में भी मनुष्य को सब से अधिक परिश्रम कर न्याय से धन उपा-

र्जन करना चाहिये। एक २ पैसे के दो २ पैसे ब्याज चढ़ा संसार की क्षती करना व्यापार करना नहीं है यह केवल एक प्रकार से खुले बाजार डाका डालना है। वह कभी वास्तव में धनी नहीं माना जाता जो अपक्रय द्वारा धनी बनने की चेष्टा करता है। इस लिये व्यापारी कर्म्मवीरों को भी केवल योग्य कर्म द्वारा ही अपना कार्य्य कर धन आदि सम्पादन करना चाहिये। गरीब समाज को बृथा कष्ट देना योग्य नहीं अपने घर को कमजोर बनाना अपना धर्म्म नहीं है इस लिए अपक्रय द्वारा धन उपार्जन न कीजिये। कर्म कर धनी बनने की चेष्टा कीजिए।

योग ।

साधन बिना यह स्वर्ग पद भी है हमें मिलता नहीं ।
बिन कार्य के साधन जगत में है कभी सधता नहीं ॥

यदि स्वर्ग की जो चाह है तो कार्यरत हो जाइये ।
इस स्वर्ग की तो बात क्या है मोक्ष भी पाजाइये ॥

कर्म के बिन हम कभी यदि मोक्ष पाना चाहते ।
बिन क्रिया बिन शुद्ध मन जो स्वर्ग जाना चाहते ॥

तो यह असम्भव सर्वथा है हम न कुछ कर पायँगे ।
इस मनुज तन को बृथा ही हम श्वान सम खो जायँगे ॥

इस अर्थ में योग शब्द का आज कल प्रयोग होता है वह चित्त वृत्तियों या इन्द्रियों का निरोध करना है परन्तु यह संकुचित अर्थ भगवद्गीता में नहीं है । इस का अर्थ युज धातु से जोड़, मेल, मिलाप इत्यादि होता है और जो साधन या उपाय इस के लिये होता है वह भी योग कहलाता है । महाभारत में भी योग शब्द का अर्थ यही आया है । सारांश यह है कि गीतानुसार "योगः कर्मसु कौशलम्" अर्थात् कर्म करने की युक्ति चतुराई को योग कहते हैं । किसी काम के करने की बहुत सी रीतियां होती हैं उनमें से उत्तम रीति "योग" कहलाती है, न्याय युक्त परिश्रमके साथ किसी कार्य्य को साधन करना योग कहला सक्ता है । गीता (अ० २. ४८)

श्लोक में लिखा है "योगस्था कुरु कर्माणि" अर्थात् योग में स्थिति होकर कर्म्मों को कर । इस प्रकार योग चाहे जिस अर्थ में लिया जावे बिना कर्म्म के निरर्थक है । जितने सन्यासी आप देखते हैं वे सारे कार्य्य करते रहते हैं । उन को भी एक अखण्ड शक्ति का स्मरण करना होता है, उसी प्रकार हम पुजारियों को भी मन्दिरों में घंटा, घड़ियाल आदि बजाते पाते हैं कि वे इस कर्म्म द्वारा ही ईश्वर को रिझाना चाहते हैं। कदाचित् यदि वे लोग भी ऐसा न करें तो उन को भी उन की कार्य्य सिद्धि प्राप्त करना असम्भव हो जाय ।

परमेश्वर केवल कर्म पर राजी रहता है । निकर्मपरायण पर वह परमेश्वर कभी राज़ी नहीं हो सक्ता क्योंकि उसने प्रत्येक प्राणी को इसी हेतु बनाया है कि वह कर्म कर जग के समक्ष अपना सार्थक मर्म खोल दे । क्या किसी भी योगी का तथा परम हंस साधु एवम् स्वामी को ऐसा देखा है जो कर्म न करता हो ! कदापि नहीं आप किसी साधु आदि को कर्मविरत नहीं पायेंगे और यदि आप पाते हैं तो वह निरा ढोंगी है वह निराडम्बरी है, बिना कर्म के कभी योग मार्ग द्वारा भी कोई सफलता नहीं पा सक्ता ।

आप देखते होंगे कि कई साधुजन सिद्धि करने के लिये उलटे वृक्ष पर टँगते हैं । कोई अपने एक हाथ के नाखून बढ़ा लेता है, कोई जटा रखता है तथा कोई बाल साफ किये रहता है । कोई सन्ध्या समय उच्चस्वर से परमेश्वर का आवाहन करता है और कोई उस का मनन करता है कोई सन्ध्या आदि करता है परन्तु कर्म अपने २ नियमानुसार अवश्य प्रत्येक पुरुष को करने ही होते हैं । इन में सिद्धि प्राप्त होना या न होना कर्माधीन है परन्तु

उन को किसी न किसी प्रकार से कार्य्यरत अवश्य होना पड़ता है वे कर्मोच्युत रह कर कभी अपनी सफलता नहीं प्राप्त कर सक्ते। यह हमने माना कि उन में से कई सफलता नहीं पाते तथा वृथा भागने का कार्य कर योगिक क्रियाओं को निःप्रयोजनीय प्रमाणित करते हैं यह उन की कायरता है परन्तु ऐसा करने से कर्म को दोष नहीं लग सक्ता। कर्म कभी दोषी माना नहीं जा सक्ता केवल प्रत्येक पुरुष की क्रिया ही दूषित हो सक्ती है। यदि मनुष्य कर्म करने के साथ योग्य क्रिया द्वारा फल सम्पादन के हेतु कर्म करे तो उसे कभी क्लेश न होगा।

हम यह नहीं कहते कि योगमार्ग भूठा है तथा योग द्वारा कोई सिद्धि नहीं पा सक्ता। यदि प्रत्येक साधु तथा वैरागी या सन्यासी उस के योग्य मार्ग द्वारा अपने कार्य्य सिद्धि के निमित्त प्रयत्न करें तो अवश्य वैसी ही सफलता पा सक्ते हैं कि जैसा उन के शास्त्र कहते हैं। परन्तु प्रश्न केवल कर्म का उपस्थित होता है। कर्म करना ही कठिन है विधिपूर्वक उस को योग्य रीति से न करना ही उन के शास्त्रों को झूठा प्रमाणित करना है। हम पूछते हैं कि क्या इन्द्रिय निग्रह जिसे साधु तथा वैरागी आदि एवम् सन्यासी सर्वश्रेष्ठ बताते हैं क्रियायें नहीं करना होती हैं। हम कहते हैं कि अवश्य होती हैं। केवल हाथ हिलाना भी एक प्रकार का कार्य है। स्वास लेना भी एक प्रकार का कार्य्य है। परन्तु प्रश्न यहां यही उठता है कि उस को योग्य रीति से करना चाहिये।

प्रत्येक कार्य के करने के साथ ही साथ उस पर किसी परिणाम विशेष की सिद्धि का भार रखना चाहिये। बस ऐसा न होना ही आडम्बर है। यदि किसी कार्य की सफलता से अपना संबन्ध नहीं है और यदि आप केवल दुनिया को फसाना चाहते हों तो बस यही आडम्बर है। जहां आडम्बर है वही दुःख है जहां

कर्त्ता क्रिया और कर्म का सार्थकरूप है वहीं पर जय है वहीं पर न्याय का जोर है और जहां पर ऐसा नहीं है वही पर अन्याय है और न्यायानुसार दण्ड भी मिलता है। जब तक वहां आडम्बर रहेगा तब तक कभी सफलता नहीं मिलैगी। ढोंगी का संसार में कोई साथी नहीं हो सक्ता। बस इसी कारण कई एक भेषधारी गुण्डे बाबा जी बने नित्य जूते खाते फिरते हैं। दुनियां में जो स्वच्छ रहता है वह धोखा नहीं खाता और जो छिपकर आडम्बरी कार्य करता है वहीं पर क्षय लगा हुआ है। इस लिये समाज का उद्देश है कि सांख्य शास्त्री भी जो कर्मोच्युत चलते हों वे भी अपने कर्मानुसार अपने योग्य पथानुगामी बन जांय फिर देखिये उन्हें भी कभी विपत्ति न झेलना पड़े। उन्हें भीख न मांगना पड़े। भीख मांगना सब से बुरा है। मैं पहले ही इस विषय को भली प्रकार लिख चुका हूं। यदि सांख्य शास्त्री अपने योग्य रीत्यनुसार कर्मकरता बन जाय तो फिर कहना ही क्या है, केवल जटा रखने से कुछ नहीं हो सक्ता और न भगवे वस्त्र धारण करने से ही कुछ हो सक्ता है। यदि मन किसी आडम्बरी कार्य में परिणित है तो वह कभी कुछ भी नहीं प्राप्त कर सक्ता।

संसार के सामने अपने साक्षात् रूप को प्रगट कीजिये यदि आप स्वयम् अपना साक्षात् रूप प्रगट करेंगे तो आप के नियमानुसार ईश्वर को भी अपना साक्षात् रूप आप के समक्ष प्रस्तुत करना होगा। और जिस किसी ने ईश्वर पाया है उसी ने उस को मन लगाकर अपनाया है। प्रत्येक स्थानों पर मन लगाने की बड़ी भारी आवश्यकता है। जहां मन लग गया कि वहीं सफलता पा ली और जहां मन नहीं लगा वहां सफलता कभी नहीं मिल सक्ती। प्रत्येक शास्त्र का यही सिद्धान्त है, बस संसार में यही एक नियम है।

सांख्य शास्त्रानुसार संसार में तीन प्रकार की शक्तियां हैं जिन का नाम क्रम से सत्व, रज और तमोगुण है। ये गुण प्रत्येक पुरुषों के अन्तःकरण में वास करते हैं। जिस समय तमोगुण अपनी शक्ति दिखाता है उस समय मनुष्य सुस्त, कायर और क्रूर हो जाता है तथा जिस समय रजोगुण अपना तेज दिखाता है तब मनुष्य तेज और शीघ्र कार्य्यकरता आदि हो जाता है इन में से एक शान्त और दूसरा अशान्त है। एक तीव्रगामी दूसरा मृतवत है, ये दोनें गुण समय २ पर अवश्य ही मनुष्य के अन्तःकरण पर धावा लगा कार्य्य की क्षीणता किया करते हैं। इन दोनें पर सत्वगुण है जो इन दोनें को ठीक रखता है न इस को बढ़ने देता है और न उस को घटने देता है। बस, इसी का नाम "कर्म योग" अर्थात् "कर्म" है जिस की व्याख्या आप अब तक करते आये हैं जिस के भेद प्रभेद अभी तक पाठकों की सेवा में भेट कर चुके ही हैं। सत्वगुण ही सब से अच्छा है और इसी के आधीन मनुष्य की कृतियायें निर्भर हैं "कर्मयोग" अर्थात् कर्म को सारे कर्म के भेद उपभेद आदि पर अपना अधिकार करना पड़ता है। बस, इसी एक को गीता में श्रीकृष्णचन्द्र जी ने अर्जुन को भली भांति समझाया है। यह "कर्म" तथा सत्वगुण ही की संसार में प्रख्याति है। यही सांख्यशास्त्र का मत है जो अपने कर्म से बराबर टक्कर खाता है और इस का तथा नीतिशास्त्र की एक सम्मति एकत्रित होती है। हां, हम यह मानते हैं कि दोनें की क्रियायें कुछ न कुछ पृथक अवश्य हैं परन्तु उद्देश दोनें के कतिपय एक ही हैं। हमें विषयानुक्रमणिकों से कोई संबन्ध नहीं है। हम केवल उद्देशमात्र एक चाहते हैं इसलिये कर्म सांख्यशास्त्र द्वारा भी प्रमाणित हो चुका।

अन्तिम सांख्यशास्त्र शांति की घोषणा करता है वह कहता है कि जहां शांति है वहीं परमेश्वर है। परन्तु शांति कभी भीख मांगने से नहीं मिलती उस के लिये सतत कार्य करने की आवश्यकता है। वह जभी मिलती है कि जब सारे कार्य कर मनुष्य सिथिल हो जाता है और उस के हृदय में कोई कामना नहीं रहती, कामना का निग्रह सांख्यशास्त्र द्वारा हो सक्ता है परन्तु वह पूर्णतया कार्य से भरा हुआ है। मोक्ष तथा स्वर्ग भी उसी कर्म परायण पुरुष के लिये है जो कार्य में परिणित होता है। कभी किसी ने बिना कार्य के मोक्षपद नहीं पाया है। क्या कभी किसी पुरुष को स्वर्ग की प्राप्ति भीख मांगने से हुई है। स्वर्ग मोक्ष शान्ति और ईश्वर आदि सभी सतत नियमित रूप से कार्य करने पर आप से ही आप उपलब्ध हो जाते हैं। इसलिये यदि स्वर्ग प्राप्ति या मोक्षपद पाने की अभिलाषा है तो कार्यरत हो जाव तभी से सारी वस्तुयें आप से आप सम्पादित हो जायेंगी काय तभी सिद्ध होगा जब कर्म करोगे अन्यथा नहीं। यह सांख्यशास्त्र मनुष्य का एक प्रकार से अन्तिम शास्त्र है।

— ० —

उपसंहार ।

कर्म, धर्म, कर्तव्य जानकर, कार्य करें, जय पावेंगे ।
अपने बल पर खड़े रहेंगे, निश्चय सुख पा जावेंगे ॥
आत्मश्लाघा, धीरज मन में, धारण कर होकर निर्भय ।
कार्य करें तन मन अर्पण कर, निश्चय होगी जय पर जय ॥
कर्महीन नर वृथा मर रहे, भाग्य एक पर हो निर्भर ।
पद पद पर ठोकर खाते, जो चलते औरों के पद पर ॥
इस से उठें कार्यरत होकर, होगा सब हम को उपलब्ध ।
पड़े पड़े यों दुख झेलेंगे, काम न आवेगा प्रारब्ध ॥

देखो तो जिस काम को आरम्भ करो उसे पूरा कर के ही रुको यही मर्दानगी है बीच में छोड़ देना कायरता है । मर्द वही है जो असम्भव का सम्भव कर दिखा दे कार्य को दिल के साथ करे । चाहे यदि प्राण भी काय सिद्धि में चले जांय तो कोई बड़ी बात नहीं है । यह प्राण जाने के ही लिये बना है फिर यदि कार्य करते एवम् अपना कर्त्तव्य साधते निकल जायँ तो उस से बढ़कर और बात ही क्या है । खटिया पर सड़कर मरने की अपेक्षा अथवा रोग ग्रसित मरने की अपेक्षा युद्ध में अथवा कर्म करते हुये मरना कितना बढ़कर है । पड़े २ वृथा सड़ जाना क्या कभी अच्छा लग सक्ता है ।

देखो तो बिना फेरे पान तथा आम या अन्यान्य फल भी सड़ जाते हैं फिर भला आप और हम तो आदमी हैं हम में उन पान और आम की अपेक्षा एक चैतन्य शक्ति विशेष है और जब कि उन के लिये भी फेरने की जरूरत होती है तब क्या अपने लिये कोई विशेष कार्य की जरूरत नहीं हो सक्ती। विघ्न और बाधाओं से सदा कहते रहो कि हम अपना कर्त्तव्य कर के हटेंगे अथवा मरकर हटेंगे. कर्मवीर बने रहो और मृत्यु से भी मत डरो। युद्धबीर बने रहो और काल को भी अपनी अनोखी साहसी कारीगरी से डराते रहो। दानवीर भी बनो तो यहां तक कि देह का भी मोह न करो। धर्मवीर ही यदि बनना है तो प्राणों का मोह क्या। देखो आप के पूर्वज अकेले ही रण में खलबली मचा देते थे उन के अकेले रहते भी सहस्रों उन पर वार नहीं कर सक्ते थे। वे जिस कार्य को हाथ में लेते थे उस को उस के अन्त तक पहुंचा देते थे। वे बीच में बिना काम के पूरे हुये विराम नहीं लेते थे। देखो तो यह कर्मक्षेत्र जग खुले स्वर्ग का द्वार है और रैारव नरक का मार्ग है यहां दोनों चीजें हैं, एक हाथ में उम्दा शक्कर के लड्डू और दूसरे हाथ में मिर्च का लड्डू, अब जो आप को उपयुक्त एवम् लाभदायक हो उसे ग्रहण कीजिए। यदि आप अपने कर्तव्य से परे रहोगे यदि धर्म से दूर भागोगे तो अपने धर्म तथा कीर्ति को नाश कर दोगे। जहां मनुष्य धर्मोच्युत हुआ कि उस को अवश्य एक प्रकार से जीवित ही नरक भोगना पड़ता है क्योंकि लोग अपयश को सदा कथन करते हैं और मानी पुरुष की अप-

* हम दृष्टान्त में वीर अर्जुन को प्रस्तुति करते हैं कि जिस की धाक में और जिस के पराक्रम से बैरियों के हृदय फटकर रह जाते थे।

कीर्ति रौरव नरक की यातना से कई गुना अधिक कड़ी है। देखो तो यदि कर्म विरत हो जावगे तो तुम को तुम्हारे साथी लोग घृणा की दृष्टि से देखेंगे और तुम्हारा निरादर करेंगे। क्या तुम को वह निरादर योग्य प्रतीत होगा, कदापि नहीं। जिन के मध्य में तुम्हारी वाह २ हो रही है उन्हीं के मध्य में तुम्हारी यदि अपयश की भेरी बोले तो क्या वह भली प्रतीत होगी, कदापि नहीं।

पहिले से सन्यस्त एवम् यौगिक मार्ग योग्य नहीं। पहिले अपना योग्य मार्ग तय कर लो निश्चय पूर्वक कर्म्मों को करो। अकमर्ण्य रहने से कर्म करना सर्वोत्तम है और यदि कर्म करना नहीं चाहते तो यह जीवन यात्रा महा दुःखद हो जायगी इस में आप को कुछ भी न सूझेगा और वृथा विवाद एवम अपवाद आप के पीछे लग जायेंगे। यह जगत् किसी को भी बे काम रहने के लिये नहीं कहता वह सदा जगाया करता है कि उठो और आगे बढ़ो। इस लिये दुनियां में मृत्यु का भय सामने लगा दिया है कि, मनुष्य कम से कम इसी को देखकर अपनी उन्नति करे। नहीं तो यह जीव सदा अमर है परन्तु यह मृत्यु इसी लिये है। यह निरन्तर सामने खड़ी रह कर सूचना करती है कि देखो मेरा आगमन होनेवाला है तुम अपना कार्य कर फारिग़ हो जाओ नहीं तो फिर समय के लिये पछताना पड़ेगा।

यह समय का माप तौल इसी लिये बना है कि कार्य कर लो। समय सब मृत्यु के हिस्से हैं यदि हम सदा कार्य किया करें तो हमें समय रखने की जरूरत नहीं और न घड़ी रखने की परन्तु हमें चेतावनी देने के हेतु यह सब सामान हमारे सामने हैं और यदि यह सब न होते तो कदाचित् हम कुछ कर ही न पाते। सब पुरुषों की जो आराम लेने की रात्रि है उस में भी संयमी

पुरुष जागता रहता है । इसे वृथा खोने का साहस मत करो, इस लिये अशक्तता को छोड़ो, जो पुरुष अशक्त है वही पापी है जो पुरुष बलक्षीण एवम् संयम रहित है वह भी पापी है क्योंकि उस ने अपने शरीर का यथार्थ उपभोग नहीं किया इसलिये वह दोषी बना ।

निरच्छित होकर मत बैठे रहो नहीं तो कुछ भी न कर पावोगे। इच्छा ही सब सफलताओं की देनेवाली है बिना इच्छा के पुरुष कुछ भी नहीं कर सक्ता है इच्छा ही सम्पूर्ण कामों को कर सक्ती है इस लिये प्रथम इच्छा होना ही सब गुणों की खानि एवं कार्य-रूप में परिणित करने का प्रथम द्वार है । इच्छा रहित न हो अपने मन को ऐसे आवेश से भूषित मत करो जो इच्छा रहित हो जाय । और न मोह बिना ही पुरुष रह सक्ता है, हम कहते हैं जगत् में ऐसा कोई नहीं है जो मोह के वशीभूत न होता हो ।

कर्म ही सब सुखों का देनेवाला है परन्तु इस को अपने धर्म के साथ करो। यदि तुम्हारा कर्म धर्म्म विरत होगा तो वह पाप का द्वार बन जायगा । जग में ऐसा कर्म करो जो धर्मयुक्त हो । अपने धर्मानुसार यदि कार्य करोगे तो वह स्वयम् आप के लिये तथा आप की शान्ति के लिये हो जायँगे । यदि स्वयम् अपने ही लिये करने को जावगे तो वे दुःखमय होकर एवं शोकयुक्त होकर आप को भी ग्रसित कर जायँगे; इसलिये अपने स्वतः के लिये कोई कार्य मत करो । अपने कर्तव्य को देखकर अपने कार्य में रत होजाव । जो कर्म के पूरे अनुयायी हो जाते हैं तो उन से माया, मोह, अपयश सब अपने आप परे हो जाते हैं । उन का फिर आप से ही आप ह्रास हो जाता है । और भी किसी कवि ने कहा है कि " नेकी कर और नदी में डाल " इस का भी यही

अथ है—औरों के हेतु कार्य करो, औरों को दुःखों से वंचित रक्खो तो स्वयम् आप को दुःख कदापि नहीं होगा और न कार्य्य दुःखी बनायेगा। परन्तु यदि अपने लिये करोगे तो वे सत्वगुण भी दुर्गुणरूप में परिवर्तित हो अपगुणी हो जायँगे।

देहधारी लोग कर्मों का त्याग कदापि नहीं करते। जो कर्म करता हुआ उस के फल को त्यागता है वही सन्यासी है, वही साधु तथा महात्मा कहा जा सक्ता है और जगत में पूजनीय है। कोई निष्कामी पुरुष योगी नहीं कहा सक्ता, करीब २ जितने धर्म हैं वे सब यही कहते हैं। जिस पुरुष ने आत्मा का वह अकर्मण्यरूपी अज्ञान अपने कर्मरूपी ज्ञान की प्रतिभा से जान लिया है वह सदा प्रकाशमान है उस का हृदय सदा ज्योतिर्मयी है। इसलिये कर्म करते हुये आगे बढ़ते जाओ आप को वही शुभ स्थान मिल जायगा जहां वह ईश्वर मौजूद है। जिस की और लोग कामना कर आप व्यर्थ अकर्मण्य रहकर अज्ञानता से अनेक ज्ञान शून्य कार्यों में रत हो जाते हैं। जितने पुरुषों के नाम आज इतिहास में आप ने पढ़े हैं वे पुरुष क्या अपने ही लिये मरते रहे हैं। उन के नाम कभी चिरकाल तक इस व्योम में नहीं व्याप सक्ते जो अपने ही लिये काय करता हो।

गरीबी कभी किसी कार्य्य की पूर्ति में बाधा नहीं डाल सक्ती परन्तु अमीरी चाहे भलेही बाधक बन जाय। गरीब यदि कार्य्य दक्ष रहेगा तो वह जरूर अमीर बन जायगा वह अवश्य उस कठिन काम को भी सरल कर देगा जिस को वह प्रथम करने में असमर्थ था; परन्तु अमीर अपनी विलासिता में पड़कर अपना सर्वस्व खो दे तो बड़ी बात नहीं है। धन कुछ काम नहीं कर सक्ता यदि मन और तन उस की सहायता न करे। धन यह एक मिट्टी के ढेर के समान है, धन की पर्वाह मत करो यदि मन

करना चाहेगा तो कार्य एक क्षण में बन जायगा। केवल धन सदा उसे करने में असमर्थ रहेगा। अमीर लोग आज कल बिलासिता में पड़कर थोड़ी २ बातों पर ध्यान तक नहीं देते कई एक अमीर चलना तक नहीं चाहते। उन को बाहरी व्यवसाय का पता तक नहीं लगता है कि घर के बाहर और खेतों में क्या हो रहा है। थोड़े दिन हुये कि यहां ऐसे अमीर थे कि जो चनों की उत्पत्ति झाड़ों से बताते थे। परन्तु उन का अन्तिम विलासता में पड़कर एसा ह्रास हुआ कि उन को उसी चने की पत्तियां भी मिलना कठिन हो गई थीं कि जिन को चाबकर अपना निर्वाह करते। बिलासिता का अन्तिम यही परिणाम हैं। परन्तु एक ग़रीब आदमी अपनी मेहनत कर असह्य वेदना सहता हुआ ऐसा अमीर बन जाता है कि उस की बराबरी अकर्मण्य नहीं कर सक्ता। देखो तो आज कल के अमीरों के सुपुत्र यह भी अनुमान नहीं करते कि अमीर कैसे बने, हमारे पूर्वजों ने इस अमीरी सम्पादन करने में क्या २ हानियां सही होंगी और कष्ट उठाये होंगे। वे अपने खर्च के सामने अपनी पूर्वोपार्जित सम्पत्ति कुछ भी नहीं समझते और अन्त में भीख मांगना पड़ती है। देखो तो यह धन उसी के हाथ का मैल है जो इस को पाने की लालसा नहीं करता अर्थात् जो परिश्रम किया करता है। धन उसी का गुलाम है, जो मन लगाकर कार्य करता है। यदि भूखे मरना हो तो कार्य्य से बिमुख हो जावो। यदि कुछ कर दिखाना है तो कार्य में परिणित हो जावो। ये जो चार गुण्डे आप के पीछे घूम रहे हैं तो क्या आप जानते हैं कि ये आप पर जान देने के लिये आप का साथ कर रहे हैं, ये चार जो आप की आज हां हुजूरी करते हैं यह आप को अनुमान है कि आप की बातें इतनी भली इन्हें प्रतीत होती होंगी। यह कोई बात नहीं है वे गुण्डे

और हां हुजूरी जभी तक आप का साथ देंगे जब तक आप के पास पूर्वोपार्जित धन है।

इन्द्रियों की तृप्त संसार में करनेहारी कोई वस्तु नहीं है, इन्द्रियां कभी विषयों से तृप्त नहीं होतीं। परन्तु वे और भी कामनाओं को बढ़ाती हैं। परन्तु धर्म अपने कर्म को बढ़ाकर आनन्द देता है और जीवन भर काम देता है। धर्म के द्वारा इन्द्रियां तृप्त हो जाती हैं और मोक्ष भी मिल सकती है। जीवन के बाद भी यदि कार्य अत्युत्तम हो तो धर्म अपनी अलौकिक छटा दिखाया करता है। परन्तु इन्द्रियों का तृप्त करना अथवा उन का तृप्त होना देह मात्र को क्षणिक सुखी करना है। इसलिये इन्द्रियों के चक्कर में पड़कर अपना सर्वस्व नष्ट भ्रष्ट न कर डालो। अपनी विचार शक्ति का उपभोग कर सोच लो कि जो कार्य आप करोगे वह किस प्रकार का है और उस के क्या परिणाम हो सकते हैं।

ईश्वर न बुरे कर्म करता है और न धर्म का भागी बनता है। मनुष्य अपने आपही अज्ञानता और ज्ञानता बश भले और बुरे कर्म किया करता है। वह ज्ञान तथा अज्ञान के आवरण से आच्छादित रहता है। इस कारण प्राणी मोह को प्राप्त हो जाता है और यही कारण है कि परमात्मा किसी के पाप और पुण्य का साझीदार नहीं और जिन जीवों का अज्ञान ज्ञान से दूर हो गया वे ही आनन्द उड़ाते हैं।

यदि जग जीवन का सार पाना है तो औरों के हेतु कार्य कर। जीवित रहना योग्य है। क्या आज आप जिन २ धर्मवेत्ता, न्यायवेत्ता आदि कर्मवीरों का नाम जानते हैं उन के कर्म ऐसे योग्य नहीं पाते ? आप अवश्य पायेंगे। प्रत्येक प्रसिद्ध पुरुषों के कर्म औरों के हेतु हुआ करते हैं। धर्म अथवा योग्य कर्म उसी का है जो औरों के हेतु अपना सब कुछ प्रदान करता है। जो

ज्ञान के कारण अपनी सम्पत्ति को दुरुपयोग से बचाता है। अपनी व्यावहारिकता और प्रामाणिकता से संसार के सामने आदर्श बन जाता है। इस संसार में अपनी भलाई चाहनेवाले तो कई पैदा हो चुके हैं और दिन पर दिन होते जाते हैं परन्तु मनुष्य वही हैं जो औरों के हेतु अपनी जान कुर्बान कर दे। हमारे यहां औरों को लाभ पहुंचानेवाले ऐसे कई पुरुष हो गये हैं कि जिन्हों ने अपना मांस तक काट कर औरों को समर्पण कर दिया है। आह ! तक जिन की ज़बान से नहीं निकला। तथा यहां ही ऐसे बिकट भी हो गये हैं जो कई दिन भूखे रहे और जिस दिन उन को अन्न मिला उस दिन यदि न पाते तो उन की जान चली जाती; परन्तु उस दिन भी उन्हों ने अपना अन्न औरों को दे उपकार किया। अब जरा सोचिये कि यह कितना बिकट साहस है। यह साहस और उन का धर्मपरायणता ही आज उन का नास अमर किये हुये हैं, जिन का नाम आज सृष्टि पर कायम है। वही अमर हैं; तथा जिन का नाम क्षय पा चुका है वे मर चुके हैं; इसलिये प्रत्येक पुरुष का धर्म यही है कि यहां पर कार्य बड़ी दक्षता के साथ औरों के कल्याण के हेतु करे। बस, यही मोक्ष का द्वार है।

यदि दिल से सीखने की उम्मेद हो तो शिक्षक की भी आवश्यकता नहीं। उसी प्रकार यदि कार्य पूर्ण करने की ओर लक्ष हो तो उसे भी सहायता की जरूर नहीं। वह स्वयम् अपने प्रयत्न से ही हो सक्ता है। परन्तु मन के चाह की बड़ी जरूरत है, यदि आप का मन उस ओर प्रवृत न होगा तो कुछ भी न हो सकेगा; इस लिये प्रत्येक पुरुष को मन स्थिर रख कर कार्य में लीन होना चाहिये। परिश्रम ही जगत का सार है, यदि उद्यम करोगे तो पेट भर भोजन पावोगे। और बिना उद्यम के यदि मर गये तो कोई

आश्चर्य की बात नहीं है। गुरु जग में कोई किसी का नहीं है। काम स्वयम् गुरु बन जाता है उसकी चाव आप में आप बाट बता देती है। हम ने कई एकों को बिना गुरु के ज्ञान पाते देखा है और जाना है। इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि पुरुष दृढ़ता पूर्वक ध्यान लगा कर धीरज के साथ कोई कार्य करता है तो वह अवश्य सफलता पा जाता है। और जिन में उपरोक्त गुण नहीं हैं वे किसी प्रकार भी अच्छा मार्ग बतानेवाला भी पाकर उन्नति नहीं कर सक्ते। उनका ध्यान भी कभी उस ओर नहीं जा सक्ता।

मनुष्य राई से वृक्ष बना सक्ता है। जिस प्रकार बड़ का झाड़ राई बराबर बीज से उत्पत्ति पाता है, जो राई बराबर बीज से उगकर दुनिया के सब से बड़े वृक्षों में शुमार किया जाता है। तो इस से जिस का हृदय शून्य के समान है अथवा जिसके हृदय में कोई उत्साह भी उमङ्ग नहीं हैं उस को उत्तेजित करना मुर्दे के शरीर में फिर से जोव डालना है।

कोई भो पुरुष यदि किसी काय को करना चाहे तो वह बड़ी सुगमता से कर सक्ता है। किसी भी पुरुष का समय के लिये ढोंग करना वृथा है। कदाचित् हजार में से एक आध ऐसे मिलते हों कि जो सचमुच ही समय नहीं पाते; परन्तु बहुत से जान बूझ कर समय की आड़ ले लेते हैं और आड़ लेकर अकर्मण्य रह जाते हैं। जिस के मन में कार्य करने की इच्छा होती है वह कई प्रकार से कुछ न कुछ समय अवश्य निकाल लेते हैं और उन को समय भी मिल जाता है परन्तु जिन के मन में इच्छा नहीं होती वे किसी प्रकार भी उस कार्य के करने को समय नहीं पा सक्ते हैं।

हम ने कई मनुष्यों को देखा है जो जानते हैं कि फलाना काय अवश्य खराब है परन्तु जान बूझ कर भी औरों को उसी के करने

का उपदेश देते हैं और सम्मति भी देते हैं। ऐसा करना महान पातक है। जान बूझ कर धोखा देना है। अथवा अपनी ईश्वरदत्त सुयोग्य बुद्धि में बट्टा लगाना है तथा अपने को और ईश्वर को लज्जित बनाना है। देखो छोटे आदमियों का साथ भी कार्य विगाड़ देता है और बात में धब्बा लगा देता है। इस लिये नीचों को कदापि मुंह न लगाओ। योग्य कार्य करने का समय पूछने की भी जरूरत नहीं पड़ती और न समय निश्चित करने ही की आवश्यकता है; क्योंकि भला कार्य जितनी जल्दी आरम्भ किया जाय उतना ही अच्छा है जिस्से कि उस की पूर्ति में बिलम्ब न लगे और उस का आनन्द बहुत थोड़े अवकाश में मिल जाय।

समय पूछने का अधिकार कुकर्मियों को ठीक रहता है कि दिन में नहीं कर सक्ते और रात में कर सक्ते हैं तथा रात में भी बारह बजे जब सब सो जाते हैं। परन्तु जो योग्य हैं तथा जो योग्य कार्य करना चाहते हैं उन्हें समय साधने की कोई आवश्यकता नहीं रहती। अवस्था भी कार्य करने में बाधा नहीं हो सक्ती इस लिये किसी भी पुरुष को अपने योग्य कार्य के करने में अवस्था का भी ध्यान नहीं करना चाहिये। ध्रुव बालक ने तपश्चर्या सरीखा विकट कार्य अपनी पांच वर्ष की आयु में ही करना आरम्भ किया था। बाल सफेद अथवा काले होना किसी भी कार्य के करने के बाधक नहीं हो सक्ते यदि शक्ति, साहस और उत्साह बर्तमान है। परन्तु तरुण भी सदा बूढ़ा है यदि उपरोक्त बातों की उस के हृदय में नीव नहीं है। जिस की जैसी नीव होगी वह वैसा ही कार्य करेगा।

कार्य बड़ी चतुरता से करो और उस को दूसरों पर प्रगट न करो जब तक वह सिद्ध न हो जाय, जब वह सिद्ध हो जायगा तब आप ही आप जग के सामने आ जायगा। उसे प्रकाशित

करने के लिये आप को प्रयास भी नहीं उठाना पड़ेगा। जिस प्रकार जब सूर्य उदय होता है तो उस समय सारी कालिमा दूर होकर लालिमा हो जाती है उसी प्रकार आप का गुण भी चमक कर अपने आप अपना ज्योतिर्मयी प्रकाश का भास प्रकाशित करेगा। आप अपने मुंह से अपने कार्य की बड़ाई न करें कार्य स्वयम् अपनी बड़ाई कर देता है। जो काम जिस लायक होता है वह छिपा नहीं रहता उस की प्रशंसा करना व्यर्थ है।

पैदा करते समय सदा ऊपर की ओर देखा करो अर्थात् जिस समय कार्य में परिणित हो जावो उस समय उन्नति दशा की ओर दृष्टि रहे। उस समय कभी मत नीचे देखो। परन्तु भोजन करती समय सदा नीचे की ओर दृष्टि रहे उस समय जो कुछ मिल जाय वह शान्ति से पा लो। परन्तु कार्य करते समय शान्त मत बनो नहीं तो सदा के लिये शान्त हो जावोगे। व्यवसाय करो सुख आप से ही मिलैगा, नया आविष्कार करो इसी से उन्नति होगी। अपनी बुद्धि का ऐसा उपयोग करो कि वह नया आविष्कार करे। यह पर्वाह नहीं है यदि आप पढ़े हुये नहीं तो कुछ हर्ज नहीं। कई एक पुरुष बिना पढ़े भी अपना कार्य बड़ी उत्तमता से पूर्ण कर सकते हैं। अपने कार्य में प्रवृत्त हो जावो पढ़ने की क्या जरूरत है। दुनियां में सब काम एक सरीखे तो है ही नहीं सब जुदे २ और जुदी २ शक्तियों से चलनेवाले हैं। उन को जिस प्रकार की शक्ति की आवश्यकता हो उसी की ओर प्रवृत्त हो जाय। देखो चलती हुई गाड़ी को दीमक नहीं खा सक्ता। उस दीमक को भी डर रहता है कि कहीं यह मुझ को भी न कूच दे परन्तु खड़ी गाड़ी उस का खाद्य बन जाती है और चलती हुई गाड़ी उस का भक्षक है। उसी प्रकार मनुष्य का और आलस्य का सम्बन्ध है।

धनियों को देख कर डाह मत करो परन्तु स्वयम धनी बनने का यत्न करो। यदि डाह करोगे तो आप की शक्तियों का वृथा अवघात हो जायगा। ईश्वर ने इस देह के भीतर ऐसी शक्तियां दी हैं जिस का विचार मात्र रोंगटे खड़े कर देता है। उस ईश्वर निर्विकार की लीला अगम्य है। अपनी शक्ति का ज्ञान सम्पादन कर लेना सब से बढ़ कर बात है उसी शक्ति की ओर ज़रा आंख उठाकर देखिये अपने शरीर ही में दुनिया के सारे रत्न हैं। यत्न करने से आप से आप आप की शरण में आ जायंगे। यत्न करो रत्न पावोगे। खड़े मत रहो एक बात का विचारते मत रह जाव। नहीं तो विचारही विचार में दिन व्यतीत हो जायगा बहुत विचारने से भी हानियां होती हैं। उस पवित्र आत्मा का स्मरण करो और साहसी बनो, आपत्ति में धीरज ही जय का कारण है। अपनी धुन में लगे रहो, धुन कभी भी न लगेगा। सेवा समाज की करो, दुःख गरीबों का हरो; यदि सुखियों को सुख पहुंचाया भी तो इस में कौन सी बहादुरी की बात है, यदि सागर में आप एक घड़ा जल डाल ही आये तो आप ने कौन सा बढ़कर कार्य किया। वहां आप के जल की जरूरत नहीं है और आप के एक घड़े जल से वहां होना ही क्या है। परन्तु वही जल एक मारवाड़ निवासी को देना फायदेमन्द होगा कि जो प्यास के मारे मरता हो और जिस के यहां से जल कई मील दूर हो। इस लिये गरीबों पर दया करो, अमीरों पर एहसान मत दिखावो। वहां आप के सामने एहसान की ऐसी ही कदर होगी जैसे कि ऊंट के उंचाई की कदर पहाड़ के सामने की जाय।

जिस का मन काम में रत रहता है वह विषय बासना से सदा परे रहता है। यदि आप अपने कार्य में लगे रहें तो आप की निगाह भी बिषयों की ओर कदापि नहीं जा सकती। कर्म

बिहीन पुरुष ही चाहे भले अपने बिचारों की दौड़ अन्याय की ओर ले जाय। हमने यह भी देखा है कि जो पुरुष कर्म करते हैं उन का मन कभी किसी ऐसे व्यसन की ओर प्रवृत्त ही नहीं हो सकता। शरीर का धर्म काम करना है शरीर काम ही के लिये बनाया गया है। यदि आप ध्यान पूर्वक बिचार करें तो जान सकते हैं कि मनुष्य का कोई क्षण बिना काम के नहीं बना हुआ है हानि लाभ में सम बुद्धि रक्खो। थोड़ी ही हानि में रो देना या थोड़े से लाभ में फूल जाना ओछा पन है।

कई एक पुरुष जो आलसी जन को शान्त कहते हैं यह उन की भूल है। शान्ति एक बड़ा भारी गुण है जो सब कार्य पूरी तरह से करने के अनन्तर कहीं उपलब्ध होता है। शान्ति ही सुख का द्वार है परन्तु शान्ति का पाना एक बड़े मार्के का काम है। जो आलस्य पर बिजयी नहीं वह अपने विषयों पर जय नहीं प्राप्त कर सकता और जो अपने बिषयों पर बिजय प्राप्त नहीं करता वह शान्ति और सुख का भोगी नहीं हो सकता। आप चाहे जौन से धर्म को देखिये अथवा चाहे जौन से मार्ग को देखिये यही रहस्य पाइयेगा। जो व्यसनी है वही सब कुछ कर सकता है, यहां व्यसन के दो भाग कर दिये गये हैं एक दुर्व्यसनी और दूसरा व्यसनी जिस का मतलब चाहे तो आप सुव्यसनी कर सकते हैं। जो सुव्यसनी हैं वही शान्ति या मोक्ष पा सकता है। उसी को स्वर्ग सुख बना हुआ है। और जो दुर्व्यसनी हैं वही नरकगामी होता है। इस लिये प्रत्येक पुरुष का धर्म है कि बीरताई से कर्म कर शान्ति प्राप्ति कर मोक्ष पाने की ओर प्रवृत्त हो जाय। इस जग में प्रत्येक बस्तुयें उपस्थित हैं जो आप की इच्छा हो वही आप पा सकते हैं। जिस की आप खोज करें वही सरलता से ढूंढ सकते हैं। यहां पर अलभ्य पदार्थ कोई बस्तु नहीं

है । सब चीजें आप के हाथ के पास हैं परन्तु आप उन को ग्रहण करना नहीं चाहते बस यही कठिनता है । यदि आप के मन में ग्रहण करने की इच्छा हो तो यह सम्भव नहीं हो सकता कि आप को कोई वस्तु न मिल सके । इस लिये हे वीर भारतीयों ! उठो और अपने २ उद्देशानुसार अपने २ कर्म में रत हो जावो । सब कुछ पावोगे अपने हाथों से ही आरामतलबी की ओर दौड़ कर दुःख का गट्ठर शिर पर उठाकर मत रक्खो ।

हम अब उसी परम पिता जगदीश्वर की वन्दना करते हैं कि वह हमारे इस अन्तःकरण में ऐसी निर्मल बुद्धि का संचार करे कि हम लोग अपने कार्य को जान कर अपने कर्म में रत हो जायें. और जगत का सार्थक मर्म जानकर उस की सेवा में लीन हो जायं । वह हम सब का प्रेमी है हम उस एक ज्योति के दास हैं जो सब शक्तियों सब वस्तुओं में एक सा अखण्ड रूप से विराजमान है । हम सब को उसी की शरण में पहुंचना है हम सब को ऐसे सुघर कार्य करना है कि जो उस जगदाधार परम पिता की सेवा में बहुत जल्दी योग्य कार्य कर पहुंच जायँ । यही हर एक के कार्य का सार्थक मर्म है । हमें यदि मोह हो तो उसी का हो और जो कुछ हमारे कर्म हों वे सब उसी के मार्ग में प्रवृत्त करनेवाले हों । जगदीश्वर ! आप को धन्य है जो आप ने हम सबों को पैदा किया है हम सब आप के दास हैं । दया कर अब ऐसी निर्मल ज्योति को जगाइयं एवम् ऐसी अनोखी शक्ति को उत्पन्न कीजिये कि हम सब सृष्टि के लोग एक क्रम उन्नति अवस्था को पहुंच जायँ और अपने कर्त्तव्य में रत हो जायँ । हम यह भली प्रकार जानते हैं कि बिना कर्म किये कुछ भी नहीं पा सकते ।

॥ इति ॥